

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

आलमगीर मज़हब

अल्लामा पी केवल सिंघ अमर सिद्धू (मरहूम)

THE UNIVERSAL
RELIGION

عالمگیر مذہب

Late Rev P. Kevel Sing Amar Sidhu
American Presbyterian

علامہ پی کیول سنگھ امرسدهو (مرحوم)

امریکن پرسبٹیرین

1925

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

“اُس کا ٹکنا قدیم الایام سے ہے”

(حضرت میکاہ نبی کا صحیفہ باب ۲ آیت)

”جو اس پتھر پر گرے گا اُس کے ٹکڑے ٹکڑے ہو جائیں گے اور جس پر وہ گرے گا اُسے پیس ڈالے گا“

(انجیل شریف راوی حضرت متی باب ۲۱ آیت ۴۴)

آل م گیر مज़ہب

He who falls on this stone will be broken to pieces, but he on whom it falls will be crushed

Matthew 21: 44

The Universal Religion

By

Late Rev P. Kevel Singh Amar Sidhu

American Presbyterian

□□□□□□□ □□° □□□□ □□□□ **अम्र** □□□□□□□ (महूम)

□□□□□□ **प्रे**□**बि**□□□□□□

1925 ई°

□□□□□□□□ □□□□□□

□□□□□□ 3

□□□□□□ □□□□: इलाही मज़हब □□□□□-ए-□□□□ □□ □□□□□□ □□ 6

□□□□□□-□□-□□□□□□□□..... 21

□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□□□□□..... 81



मख़्ज़ी (छिपा) कमा-उदीन साहब एल° एल° बी° अहमदियत आख़िरकार (अलविदा) सुत्री मुसलमान हिन्दुस्तान वापस मसीहियत "यनाबीअ-उल-मसीहियत" "ज़ा-ए-मसीहियत" अ-उल-मसीहियत दरख्वास्त साहब जिल्द इस (12) न-ए-मुतालआ मो-बुह-शैर्न (मिलती-जुलती खासियतों) अम्र मज़हब, बाबिल, फ़िलिस्तीन वग़ैरह-वग़ैरह ज़माने में मसीहियत पेशतर मज़हब फ़ल्सफ़ा इल्म

मज़हब मसीहियत मन व अन (जैसे के तैसे) ए-उल-मसीहियत (खुलासा) बा'ज़ वग़ैरह

कद्र □□□□ □□□ □□□□ है, कि □□□□□ □□□□□'आ □□ मक्सद □□
 □□□ □□□□ □□ □□□□, □□□□□'□ □□□□ □□□□ □□□□□'आ □□
 □□'□□ □□ □□□□□ □□□□ □□□□ □□ □□□□ □□□ □□□□ □□।
 □□□□□ साहब □□ □□□□ □□'□□ (खयाल) □□□ □□□□ "□□□□ □□
 खीर □□□, □□ □□□ □□□□□" □□□□□ मसीहियत □□ □□□ □□
 □□□□□ □□□ □□□□□ □□□ □□। □□□□ □□ □□□□ □□□ □□ □□□□□
 □□।

□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ □ खालिक □□□-ओ-मकाँ □□
 साहिबे □□□□ □मति□□□□ □□□□□ □□□ व मौला □□□□□□□ □□□ □□□□
 □□ □□□□□ □□□□□ □□□ □□ □□ आस्मान □□ □□ □□ □□□□-□□-
 □□□□ □□ □□□□□ □□□ □□□ □□□ है, कि □□ □□ □□□□□□ हदिया
 □□ □□□□ □□□ □□ □□जु□□□□□ □□ □□□□ □□ □□□□□□□□□□
 □□□ □□□□ □□ □□ "□□ □□□□ □□ □□□ घट्टू"

□□□□□ □□□□□ □□□□□ □□□□□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□□

27 जूलाई 1924 ई° पी° □□° □□° अमर □□□□□□□

आगे चल कर लिखते हैं कि "ये अम्र भी नामुम्किन है कि खुदा त'आला एक वक़्त इन्सान को सही रास्ता बताए, लेकिन जब इन्सान अपनी ग़लतकारी से वो रास्ता खो बैठे या उस की शक़ल व सूरत बदल दे, तो वो हादी हक़ीक़ी ख़ामोश रहे और इन्सान को ग़लती पर क़ायम रहने दे। इसी तरह ये अम्र भी उस की शान तौहीद से दूर नज़र आता है कि वो पहले तो एक राह हिदायत तज्वीज़ करे, फिर हज़ारों बरस के तजुर्बे के बाद वो राह जब उसे मुफ़ीद नज़र ना आए, तो उस की जगह एक और राह तज्वीज़ करे, जैसा कि कलीसिया की तालीम है। ये तो उस के इल्म अज़ली पर एक बदनुमा धब्बा है। सच है, रब-उल-अफ़वाज फ़रमाता है, "मैं खुदावंद हूँ, मैं बदलता नहीं।" और बलआम कहता है, "खुदा इन्सान नहीं जो झूट बोले, ना आदमी ज़ाद है कि पशेमान हो।" बेशक़ खुदा जो है, उसकी राह कामिल है। और जो कुछ वो करता है, अपने मुक़र्ररा इंतज़ाम और इल्म साबिक़ के मुवाफ़िक़ करता है। मगर ज़हूर उस का बनी नूअ इन्सान के सामने उस की हालत और तबीअत के मुताबिक़, ख़ास-ख़ास मुक़र्ररा वक़्त और सूरत में हुआ करता है।

उस की राहें कामिल हैं, जिन में किसी क़िस्म का नुक़्स या कमी नहीं है। मज़हब का इन्क़शाफ़ बतद्रीज होता है। इस दुनिया में पैदाइश, परवरिश, नशो-नुमा में हम तबीअत आलम या सुन्नत-ए-इलाही ये देखते हैं कि उनके हर एक काम तद्रीजी होते हैं, यक़लख़्त आन की आन में कोई भी शैय या काम अल्लाह त'आला का ज़हूर में नहीं आता।

हस्बे मौक़ा और हस्ब ज़रूरत, खुदा के सारे काम बतद्रीज और इंतज़ाम के साथ होते हैं। खुदा बेइंतज़ामी का बानी नहीं है। तो क्या मज़हब के बारे में ये क़ानून उस का नुक़्स साबित करता है? मज़हब हक़का की, जो नूह से लेकर बल्कि आदम से लेकर मसीह खुदावंद तक आया, ज़ाहिरी शक़ल और सूरत बतद्रीज नमूदार होती रही, जिसका तकमिला मसीह में हो गया।

दरख़्त में पहले सिर्फ़ गोल सी छोटी सी हरे रंग की डोडी होती है, फिर वो रफ़्ता-रफ़्ता कली बन जाती है, फिर फूल बनता है, फूल से फल बनता है, जो इब्तिदा में बहुत छोटा और मामूली शक़ल का और बदमज़ा होता है, मगर थोड़े ही अर्से में जो उस के लिए मुक़र्रर होता है, और जूँ जूँ उस की तरक़की के सामान मुहय्या होते जाते हैं, वो आख़िरकार पूरा बढ़कर पक़ जाता है, अपनी परवरिश और शक़ल में ख़ूबसूरत, और ज़ायक़े में मज़ेदार, और खाए जाने के क़ाबिल बन जाता है। मज़हब के बारे में भी हम यही क़ानून अमल-दर-आमद होता हुआ देखते हैं, जैसा कि किताब-ए-मुक़द्दस के मुताल'ए से ज़ाहिर होता है।

जो क़वानीन माद्दी आलम में जारी और तारी और सारी हैं, वही रूहानियत में भी क़ायम और ज़ेर-ए-अमल हैं। जब सहीफ़ा फ़ित्रत और सहीफ़ा इल्हाम एक ही

मुसन्नफ़ हक़ सुब्हानहु की तस्नीफ़ से हैं, तो क्या वजह है कि एक में तो कुछ और क़ानून पाए जाएं और दूसरे में कुछ और? जब मुक़त्तन (क़ानून बनाने वाला) एक है, तो उस का क़ानून भी एक है। जब तब'ई मज़हब एक है, तो अख़्लाकी और रुहानी मज़हब भी एक ही होंगे, अगर एक में तद्रीज और तरक्की का क़ानून जारी है, तो दूसरे आलम में ये क्यों जायज़ नहीं हो सकता?

लेकिन ये उस का नुक्स नहीं, ये क़ानून है, जो राह हम उस की आज देखते हैं, वही हज़ारों बरस पेशतर और हर क्रौम में देखते हैं, "गो इन्सान अपनी ग़लतकारी से वो रस्ता खो बैठे या उस की शक़ल व सूरत बदल दे।" ताहम मुम्किन है कि वो हादी हक़ीकी ख़ामोश रहे और इन्सान को ग़लती पर क़ायम रहने दे। मसीह का भी दुनिया में आना ऐन वक़्त पर हुआ (रोमियों 5:6)

"चुनान्चे उस ने अपनी मर्ज़ी के भेद को अपने उस नेक इरादे के मुवाफ़िक़ हम पर ज़ाहिर किया, जिसे अपने आप में ठहरा लिया था, ताकि ज़मानों के पूरे होने का ऐसा इंतज़ाम हो कि मसीह में सब चीज़ों का मजमूआ हो जाए, ख़्वाह वो आस्मान की हों, ख़्वाह ज़मीन की। इसी में हम भी उस के इरादे के मुवाफ़िक़, जो अपनी मर्ज़ी की मस्लिहत से सब कुछ करते हैं, पेशतर मुक़र्रर होके मीरास हैं।" (इफ़िसियों 1 बाब 9 से 11 आयत) पस उस हादी हक़ीकी ने वही रस्ता मसीह में दिखाया, जो नूह के ज़माने से बल्कि उस के पेशतर आदम और हव्वा के ज़माने से मुक़र्रर था, और चला आता है, जिसको ख़्वाजा साहब "मज़हब हक़का" के नाम से मौसूम करते हैं।

और ख़्वाजा साहब का ये कहना कि अहले-किताब "किताब-उल्लाह" को मुहर्रफ़ कर चुके थे, ना सिर्फ़ ख़िलाफ़-ए-वाक़िया और बिला-सबूत है, बल्कि खुद उन के कुर्आन के ख़िलाफ़ है, जिसमें उन कुतुब समाविया साबिक़ा (पहले नाजिल हुई आसमानी किताबों) की तस्दीक़ हुई है। अहले-किताब और बिल-ख़ुसूस अहले इंजील को हुक्म हुआ है कि "अगर तुम इंजील को और जो कुछ उसमें लिखा हुआ है, क़ायम ना करो, तो तुम फ़ासिक़ हो।" (माइदा रुकूअ 7) "या अगर तुम तौरैत और इंजील को और जो कुछ उस में दर्ज है, क़ायम ना करो, तो तुम कुछ राह पर नहीं हो।" (माइदा रुकूअ 9) और फिर गोया ख़ुदा हज़रत मुहम्मद साहब को फ़रमाता है, "कि अगर तू शक़ में है उस से, जो उतारा हमने तुझ पर, तो पूछ अहले-किताब से, जो तुझ से पहले किताब पढ़ते हैं।" (यूनुस 10) और फिर ये भी बताया है कि उन में नूर है, हिदायत है, रहमत है। पस क्या ये सब बातें उन्हीं "मुहर्रफ़" (तहरीफ़-शुदा) किताबों के हक़ में हज़रत मुहम्मद ने फ़रमाई? क्या ये मुम्किन था कि तौरैत और इंजील को हज़रत मुहम्मद ऐसी ताज़ीम दें, और उनकी अहले-किताब को तल्कीन करें, और फिर मुहर्रफ़ (बदली हुई) भी ठहराएँ? हमें ख़्वाजा साहब के साथ इस अम्र में बड़ी हम्ददी है कि वो मसीहियत के साथ

○○○○○ ○○○○○○ ○○ ○○○○ ○○ ○○○○ ○○ ○○ ○○○ओ। (सूरह आले-
इमरान ○○○ 64)

○○ ○○○ ○○○ ○○ कुर्आन ○○ ○○○○○○○○○ ○○ ○○○○○ ○○○दे
○○ ○○○○○ ○○○ ○○○○○ ○○○। ○○○ ○○○ ○○○○○○○○○ ○○○
○○ ○○ ○○○ ○○○○ (मज़मून) ○○ ○○○, ○○○ ○○○○○○ ○○○○○
○○○○○ ○○○○ मसीहियों ○○ ○○○○ (ताना) ○○○○ ○○○ ○○। इंजील
○○○ ○○○ इब्ने मर्यम ○○ ○○○○ ○○○○ ○○○○○○ ○○○○○○ ○○○ ○○○
○○, ○○○○○○ ○○○○○○○, ○○○○ ○○○○ ○○ ○○○○ क़द्र ○○ ○○○○○
(इफ़िसियों 4:13) ○○○○ जिस्मानियत ○ अख़्लाकि○○○ ○○ ○○○○○○○○○ ○○
○○○ ○○○○○○○○ “○○○○○○○ ○○ ○○ ○○ ○○○○○○ ○○ ○○○○○○○○○ ○○
○○○ ○○○ दर्मियानी ○○ ○○, ○○○○ ○○○○ येसू ○○ ○○○○○○○○ ○○।” (1
तीमुथियुस 2:5) ○○○ कलिमतुल्लाह (كلمته الله) ○○○○ ○○ ○○○○○○ ○○ ○○
○○○○○ ○○○○○○○○ ○○, ○○ ○○○○ ○○○○○○○○ ○○○, ○○ फ़ज़ल ○○
○○○○○○○ ○○ ○○○○○○ ○○ ○○, ○○○○○○ दर्मियान ○○○। ○○ ○○ ○○
उस ○○ ○○○ ○○○○ ○○○○, ○○○○ ○○○○ ○○ ○○○○○○○○ ○○ ○○○○○।”
(यूहन्ना 1:14) “○○○○○○○○○ ○○○ ○○ ○○○○ ○○○○ ○○ ○○○○
○○○○○○○ उ○○ ○○○ ○○○○○○○○ ○○○।” (कुलस्सियों 1:19) कलिमतुल्लाह
(كلمته الله) ○○○○ ○○ ○○○○ ○○ ○○○○○○○○○○○○○○○○○○○○○ ○○
“○○○○○ ○○ ○○○○ ○○ ○○○○।” (यूहन्ना 10:30) ○○ ○○ “○○○○○ ○○○○ ○○○
○○○ ○○ ○○○○ ○○○○○○○○ ○○।” ○○ “○○○○○○○ ○○○○ ○○○○ उस ○○
○○○ ○○ ○○○○” (यूहन्ना 14:9)

○○○ ○○○○○○○○○○○○ ○○ ○○○○○○ ○○ ○○ ○○ ○○○○○○ ○○ ○○
“○○○○○○○ ○○○○ ○○○○ ○○○○ ○○○○ ○○ ○○○○ ○○” (यूहन्ना 14:28) ○○○○○
○○○○○ “उस ○○ ○○○○ ○○○○ ○○○○ ○○○○ ○○ ○○○○ ○○ ○○○○○○ ○○
○○○○○ इख़्तियार ○○○।” (फिलिप्पियों 2:6 ○○ 8) इसलिए ○○ ○○○○○○ ○○
“○○○○○○” ○○ (○○○○○ 3:13) ○○○○ ○○○○ मत्ती 12:18 ○○○○ ○○ उस
○○ “○○○○○○” ○○○○ ○○। (○○○○○ यसायाह 42:1 ○○ इक्तिबास ○○○।
○○○○○ ○○○○○○○○○○ ○○○○ ○○○○○○ त'आला ○○○○○○ ○○ “अब्द” (बंदा)
○○○○○ ○○ ○○ ○○ कुर्आन ○○ ○○○○○○ ○○○ “अब्दुल्लाह” (अल्लाह का बंदा)
○○ ○○ ○○○○ ○○○○○○○○ ○○ ○○○○○○○○○○○○○○○○○○○○○ ○○ ○○○○○
○○○○○○○ ○○○○○○ ○○। (यूहन्ना 20:17)

ख़्वाजा साहब के क़ौल के मुताबिक़, “कुल तनाज़'आत तो उनकी ज़ात के
मुताल्लिक़ हैं।” (सफ़्हा 11) और हम में और मुसलमानों में ये एक ऐसा कलमा है,
जो (जैसा कि इख़्तिसारन बता दिया गया, और इस से ज़्यादा भी बताया जा सकता

है) हमारे और तुम्हारे दर्मियान बराबर है। मगर ताज्जुब है कि "कुल तनाज़'आत तो उनकी ज़ात के मुताल्लिक हैं", और "ज़ात" को छोड़कर उनकी असली हैसियत की बाबत फ़ैसला चाहते हैं। मसीह की ज़ात की बाबत फ़ैसला करने से अम्दन (जानबूझ कर) गुरेज़ करते हैं। मगर हम ख़्वाजा साहब की इबारत में सिर्फ अल्फ़ाज़ आगे-पीछे रखकर, ख़्वाजा साहब ही के अल्फ़ाज़ में तमाम मुसलमान भाईयों को यूँ मुखातिब करते हैं:

"दोनों की मुहब्बत का नस्ब-उल-ऐन (मक्सद) एक ही है, तो फिर क्यों हम में फ़साद हो? कुल तनाज़'आत तो उनकी ज़ात और असली हैसियत के मुताल्लिक हैं। क्यों न आशीती (सलामती) और मुहब्बत से अपने महबूब की असली ज़ात और हैसियत को मुतहक्किक कर लिया जाये?"

हम खुदावंद मसीह को ब-एतबार "कलिमतुल्लाह" (كلمته الله) होने के ज़ात-ए-इलाही मानते हैं। क्योंकि "कलिमतुल्लाह" (كلمته الله) मख्लूक नहीं, और "खल्क करने" और "ग़ैब की" सिफ़त कुर्आन में मसीह से मन्सूब की गई है (जिन उमूर का ज़िक्र यहाँ बाइस-ए-तवालत और बे-महल होने के क़लम-अन्दाज़ किया जाता है)। लिहाज़ा हम मसीह को ना तो "مَنْ ثَوْنِ اللَّهِ" (अल्लाह के सिवा) रब मानते हैं, और ना हम उसको "ग़ैर-उल्लाह" (अल्लाह का ग़ैर) समझकर रब के साथ उस का शरीक करते हैं। हम इस को शिर्क और कुफ़्र समझते हैं। पस वो ग़ैर-उल्लाह (अल्लाह के सिवा) या मख्लूक-इलाह (या पैदा कर्दा मख्लूक) नहीं। वो "शैय" (चीज़, मख्लूक) नहीं, बल्कि (यूहन्ना 1:1) के मुताबिक, "इब्तिदा में कलमा था, और कलमा खुदा के साथ था, और कलमा खुदा था।"

यूनानी लफ़्ज़ "लोगास" ΛΟΓΟΣ के म'अनी "कलमा" हैं, जिसके म'अनी "कलमा" हैं, जिसका मुरादिफ़ लफ़्ज़ "कलाम" इंजील के उर्दू तर्जुमा में मुस्तअमल (इस्तिमाल हुआ) है। पस मसीह की अस्ल ज़ात "कलिमतुल्लाह" (كلمته الله) और अस्ल हैसियत "रसूल-अल्लाह" या "अब्दुल्लाह" है। क्या ये उमूर كَلِمَةٍ سَوَاءٍ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ नहीं हैं? क्या ये हम में और आप में "मुफ़ाहमत के मवाद" नहीं हैं?"

फिर सफ़हा 2 से 10 तक में ख़्वाजा साहब ने जो कुछ मज़हब हक्का... या इस्लाम की बाबत तहरीर किया है, उस को मैं आँजनाब ही के अल्फ़ाज़ में, मगर इख़्तिसार के साथ यहां दर्ज करता हूँ। वो हुवा हाज़ा:

"मज़हब हक्का... जो इस से पहले नूह से लेकर सय्यदना मसीह तक हर क्रोम व मिल्लत को दिया गया।" (सफ़हा 5)

“जिस्मानियात में साईस ने हमें उन क़वानीन का पता दिया, जो खुदा त'आला ने निज़ाम-ए-आलम को चलाने के लिए बनाए। हम मजबूरन उन क़वानीन पर चलते हैं। उन क़वानीन पर चलने का नाम इस्लाम है... साईस ने अपनी हर शाख़ में इसी अम्र पर मुहर-ए-सदाक़त सब्त की है। हर शो'बा-ए-ज़िंदगी में इन्सान का यही मज़हब है। जिस्मानियत में या ज़हनियात में अगर इन क़वानीन को इन्सानी मुशाहिदे और तजुर्बे ने दर्याफ़्त कर लिया है, तो अख़्लाकियात और रूहानियत में इल्हाम-ए-इलाही ने क़वानीन-ए-इलाहियह की तरफ़ इन्सान की रहनुमाई की। इन क़वानीन पर चलने का नाम, ख़्वाह जिस्मानियात में हो या रूहानियात में, अरबी ज़बान ने “इस्लाम” तज्वीज़ किया है। क्या हम इस तरीक़ से इन्हिराफ़ (ना-फ़र्मांनी) कर सकते हैं? हमारा इन म'अनों में इस्लाम से मुनहरिफ़ होना तबाही और हलाक़त को ख़रीदना है।”

इस के साथ कुर्आन की ये आयत दर्ज की है:

أَفَعَيِّرْ دِينَ اللَّهِ يَتَّبِعُونَ وَلَهُ أَسْلَمَ مَنْ فِي السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ طَوْعًا وَكَرْهًا وَإِلَيْهِ يُرْجَعُونَ،،،
وَمَنْ يَتَّبِعْ غَيْرَ الْإِسْلَامِ دِينًا فَلَنْ يُقْبَلَ مِنْهُ وَهُوَ فِي الْآخِرَةِ مِنَ الْخَاسِرِينَ

(सूरह आले-इमरान, आयत 83 और 85)

तर्जुमा: दीन-ए-अल्लाह के सिवा वो किस दीन की तलाश करते हैं? देखते नहीं कि ज़मीन और आस्मान में जो कुछ है, वो तौअन व करहन (खुशी से या नाखुशी से) उसकी इताअत कर रहे हैं। खुदा के नज़दीक तो दीन इस्लाम है। और जो शख्स इस्लाम के सिवा किसी और दीन की तलाश करे, वो उस से हरगिज़ मक़बूल ना होगा, और वो आख़िरत में नुक़सान उठाने वालों में होगा।

“कोई है जो इस सदाक़त से अमलन इन्कार करे, और आन-ए-वाहिद में उसकी ज़िंदगी का ख़ातिमा ना हो। यही मज़हब, यही बात खुदा के कुल नबियों ने तल्क़ीन की। “ला इलाह इल्लल्लाह” (لا الله الا الله) की यही हक़ीक़त है। अहले-किताब को इसी हक़ीक़त की तरफ़ बुलाया गया है।”

इस तमाम इक्तिबास में ख़्वाजा कमाल-उद्दीन साहब ने ये बताया है कि क़वानीन-ए-तबर्ई के मुताबिक़ चलना इस्लाम है, यानी इस्लाम दीन-ए-फ़ित्री का नाम है, और इसका ताल्लुक़ जिस्मानियात या ज़हनियात से है। और तमाम आलम में, यानी आस्मान और ज़मीन और उनकी तमाम अश्या पर, जिसमें खुद इंसान भी

शामिल है, जारी और सारी है। और जबरी तौर पर सब को तौअन व करहन (खशी या नाखुशी से) मानना पड़ता है। इन में किसी को चारा नहीं।

और "जो इस सदाक़त से इन्कार करे, यानी उसकी फ़रमांबदारी से इन्कार करे, तो आन-वाहिद में उसकी ज़िंदगी का ख़ातिमा हो जाता है। इन क़वानीन को इंसान ने "मुशाहिदे और तजुर्बे" से दर्याफ़्त कर लिया है, ये क़वानीन लातब्दील हैं।

दूसरी तरफ़ आप कहते हैं कि:

"अख़्लाक़ियात और रूहानियत में इल्हाम-ए-इलाही ने क़वानीन-ए-इलाहिया की तरफ़ इंसान की राहनुमाई की।" मतलब साफ़ है, इन दोनों में इफ़्तिराक़ ज़ाहिर है। "इल्हाम-ए-इलाही" का ताल्लुक़ अख़्लाक़ियात और रूहानियत से है, मगर फ़ित्री क़वानीन जिस्मानियात और ज़हनियात से इलाक़ा रखते हैं। एक की इताअत इंसान पर जबरी है, दूसरे पर इख़्तियारी। जैसा कि तजुर्बे और मुशाहिदे से नज़र आता है। एक की ख़िलाफ़-वर्ज़ी से "आन-वाहिद में ज़िंदगी का ख़ातिमा" हो जाता है, मगर दूसरे क़वानीन में ऐसा नहीं।

पहली क्रिस्म के क़वानीन का पता तो हमें "साईस" ने दिया है, मगर दूसरे का पता इल्हाम-ए-इलाही ने दिया है। क़वानीन-ए-फ़ित्री का पता "निज़ाम-ए-आलम" की तल्कीन है, "मगर इल्हाम-ए-इलाही" की तल्कीन खुदा के नबियों ने की। जिस अम्र की तल्कीन अम्बिया ने की, वो "ला इलाह इल्लल्लाह" (لا اله الا الله) है। मगर क़वानीन-ए-फ़ित्री का कोई "कलमा" बयान नहीं किया गया।

पस ज़ाहिर है कि आपका ये फ़रमाना कि "इन क़वानीन पर चलने का नाम, ख़्वाह जिस्मानियात में हो या रूहानियात में, अरबी ज़बान ने इस्लाम तज्वीज़ किया है", कहाँ तक दुरुस्त और मौजूं हो सकता है? क़वानीन-ए-तबई की ख़िलाफ़-वर्ज़ी की ना तो तौबा हो सकती है, ना माफ़ी। इनके लिए न किसी नबी की ज़रूरत है, ना किसी हादी की। लेकिन अख़्लाक़ी और रुहानी क़वानीन में तौबा भी है, अम्बिया की तल्कीन भी है, उनकी ख़िलाफ़-वर्ज़ी भी हो सकती है, और हो रही है। उनका असर फ़ौरी नहीं होता, बल्कि दरंग (देर) के साथ होता है, हत्ता कि क्रियामत में उनका असर मुकम्मल तौर पर होगा।

पस देखो, क़वानीन-ए-फ़ित्री (जिसे ख़्वाजा साहब इस्लाम के नाम से मौसूम करते हैं) और क़वानीन-ए-इल्हाम-ए-इलाही में कैसा आस्मान-ज़मीन का फ़र्क़ है। एक और बात क़ाबिल-ए-ग़ौर है। वो ये कि ख़्वाजा साहब ने मुहम्मदी "कलिमा-ए-

तय्यिब" में "मुहम्मदुर-रसूलुल्लाह" को खारिज करके सिर्फ "ला इलाह इल्लल्लाह" (لا اله الا الله) ही को इस्लाम में शामिल किया है। और बात भी दुरुस्त है, क्योंकि जिस अम्र की खुदा के कुल नबियों ने तल्कीन की, वो "ला इलाह इल्लल्लाह" (لا اله الا الله) है, ना कि उस के साथ "मुहम्मदुर-रसूलुल्लाह" (محمد الرسول الله) भी। भला इस से किस अहले-किताब को इन्कार है? ये तो ख्वाजा साहब के कहने के मुताबिक "मज़हब-ए-हक्का" है-और यही मज़हब नूह से लेकर मसीह तक हर क्रौम व मिल्लत को दिया गया। इस अम्र में तो हमारे और तुम्हारे दर्मियान इख्तिलाफ़ ही नहीं। अगर इख्तिलाफ़ है तो ये कि "मुहम्मदुर-रसूलुल्लाह" (الرسول الله محمد) तुम उसके साथ क्यों लगाते हो, जिसकी खुदा के किसी नबी ने तल्कीन नहीं की। बस मुसलमान तो मसीही हैं, क्योंकि वो इस्लाम ला इलाह इल्लल्लाह (لا اله الا الله) की पैरवी करते हैं, और तुम मुसलमान नहीं, क्योंकि अस्ल कलिमा-ए-तय्यिब में हज़रत मुहम्मद साहब को, जो बशर (इंसान) हैं और मख्लूक हैं, उस में शरीक करते हो।

यहाँ तो मुहम्मदियत के पाँचों अरकान भी ख्वाजा साहब ने इस्लाम से खारिज कर दिए। खुदा ख्वाजा साहब का भला करे जिसने इस्लाम की सही तश्रीह कर दी। जनाब-ए-मन! जब इस्लाम यही है, जैसा कि ऊपर ज़िक्र हो चुका है, तो फिर इसके क्या म'अनी कि "अगर इस्लाम और ईसाइयत में एक किसम का मुफ़ाहमा (समझौता) हो जाए?" इस्लाम और ईसाइयत में तो फ़र्क ही ना रहा।

कुर्आन तो सय्यदना ईसा के बारे में यूँ कहता है कि "وجيها في الدنيا والاخرته" "कलिमतुल्लाह, रूहुल्लाह।" यही खुदा के कुल नबियों ने भी तल्कीन की है। ये तमाम उमूर इस्लामिया में से चंद उमूर हैं। इस्लाम और ईसाइयत तो एक ही बात है।

फिर इस्लाम और ईसाइयत में एक किसम का बिरादराना मुफ़ाहमा कैसा? हाँ, अलबत्ता ईसाइयत या इस्लाम में और मुहम्मदियत में अगर किसी किसम के बिरादराना मुफ़ाहमा (समझौते) की ज़रूरत कहो तो ये और बात है, मगर उनमें मुफ़ाहमा के लिए किसी किसम का मवाद मौजूद नहीं। लिहाज़ा मुफ़ाहमा (समझौते) का मुतालिबा भी फुज़ूल है।

हम तो पेशतर (पहले) ही खुदावंद मसीह को दुनिया और आखिरत में "वजीहा" (وجيه) जानते और मानते हैं। लफ़ज़ "वजीहा" (وجيه) सिफ़त-ए-शुब्बह है, ब-रौज़न "समीअ" (سميع), और जिसका माद्दा "वजह" (وجه) है, ब-म'अनी "चेहरा", और मफ़हूम उसका वो शख्स है जिसमें हर दो जहान में लोगों की तवज्जोह को अपनी तरफ़ फेर लेने की दाइमी सिफ़त पाई जाती है। जिस तरह खूबसूरत, शकील जवान को "वजीह" इसलिए कहते हैं कि उसकी जिस्मी बनावट में

ऐसे ख़वास पाए जाते हैं जिनसे देखने वालों की नज़र और तबीअत उसकी तरफ़ फिर जाती है और उस को देखकर दिली इत्मीनान और मसरत हासिल करते रहते हैं।

इसी तरह सय्यदना ईसा मसीह में ऐसे ख़वास दाइमी मौजूद हैं कि हर दो जहान में नाज़िरीन की तवज्जोह को अपनी तरफ़ खींचने के क़ाबिल हैं, और लोग उसी की तरफ़ तवज्जोह करने से "फ़लाह-ए-दारेन" हासिल कर सकते हैं। मसीह के सिवा कोई भी "وَجِبَاءٌ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ" नहीं है। और उसकी रिसालत में, दीगर अम्बिया से बढ़कर-माद्दा-ए-फ़ज़ीलत ये है कि:

अव्वल, वो "कलिमतुल्लाह" है, जो मरियम की तरफ़ डाला गया, यानी उसके बतन-ए-अज़हर से "कलिमतुल्लाह" ने जिस्म-ए-इंसानी इख़्तियार किया। फिर ये कि, (जैसा कि सय्यदना मसीह ने फ़रमाया है) "इब्रे-आदम इसलिए नहीं आया कि ख़िदमत ले, बल्कि ख़िदमत करे, और अपनी जान बहुतेरों के बदले फ़िद्या में दे।" (मत्ती 20:28)

यानी अपनी मुआवज़ाना कुर्बानी से ईमानदार को ख़ुदा के करीब ले आए। ख़ुदा के कुर्ब में इंसान को लाने के लिए जो मूसवी शरीअत में और दीगर अक्वाम में जानवर ज़बह किया जाता था, उसको "कुर्बान", यानी "ख़ुदा के कुर्ब में लाने वाला", कहते थे। और यही म'अनी लफ़ज़ "कुर्बानी" के है, और उसका मफ़हूम, अब भी मुरव्वज है।

एक और माद्दा ये है कि वो ख़ुदा का बनी-नूअ इंसान पर अपने में ज़ाहिर करता है। चुनाच्चे उसने ख़ुद फ़रमाया: "जिसने मुझे देखा, उसने बाप को देखा", "क्योंकि मैं और बाप एक हैं।" और भी बहुत उमूर इसमें शामिल हैं।

कुर्आन ने मसीह को "वजीहुन फ़िल-दुनिया वल-आख़िरह" (وَجِبَاءٌ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ) मगर ये न बताया कि वो ऐसा किन उमूर में है। और यही इस्लाम है, जिसका कुर्आन ने इशारा तो किया, मगर साफ़ न बताया, क्योंकि उसको भी इन उमूर का पूरा पता नहीं लगा। मगर ख़ुदा के कुल नबियों ने "इसी इस्लाम की तल्कीन की है।" मिसाल के तौर पर देखो, यसायाह नबी की किताब (बाब 53) और दानीएल नबी की किताब (9:24-27)।

हमें अफ़सोस है कि ख़्वाजा साहब ने सय्यदना ईसा मसीह को "वजीहुन फ़िल-दुनिया वल-आख़िरह" (وَجِبَاءٌ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ) कलिमतुल्लाह, रूहुल्लाह तो कह दिया और तस्लीम कर लिया, मगर ऐसा कहने की कोई वजह बयान नहीं की, जिसकी तल्कीन अम्बिया किराम ने भी की हो, ताकि वो इस्लाम में शामिल हो जाए। बल्कि सिर्फ़ ये कहकर गुज़र गए कि "हम बलिहाज़-ए-मन्सब नबुव्वत, आप में और अपने

नबी में कोई फ़र्क नहीं करते।” हालाँकि कुर्आन ने मज़कूर-बाला अल्फ़ाज़ सय्यदना मसीह की शान में कहकर, दीगर अम्बिया और मसीह में फ़र्क कर दिया। मसीह के अलावा कुर्आन में ये शान किसी नबी की नहीं आई। वो तो “*ايته للناس ورحمته سناد*” है... वगैरह वगैरह। इस तरह मसीह को सबसे ज़्यादा मुमताज़ कर दिया। और “*النبيين على بعض ولقدس فقلنا بعض*”, कह कर हज़रत मुहम्मद पर, और सब अम्बिया पर भी फ़ज़ीलत दी। जब कुर्आन शरीफ़ ही ने फ़र्क कर दिया, तो फिर आप न करें, ये आपका इख्तियार है।

मन्सब के बारे में तो इतना कह दिया, मगर मसीह की ज़ात और काम के बारे में, जो नीज़ इस्लाम है और खुदा के कुल नबियों ने जिसकी तल्क़ीन की है, बिना तहक़ीक़ किए दरगुज़र कर जाना, मेरी दानिस्त में कुछ अहमीयत रखता है। और वो ये कि ख़्वाजा साहब दिल में तो सब बातों के क्राइल हैं और मानते हैं, मगर ज़बान पर लाने से डरते हैं। ये तो फ़रमा दिया कि “इस्लाम में ऐसे मुफ़ाहमा (समझौते) के लिए बहुत मवाद मौजूद है”, मगर वो मवाद न बताए।

जनाब-ए-मन-वो मवाद मैं बताए देता हूँ, जो कुर्आन में मौजूद है, जिनकी तल्क़ीन तमाम अम्बिया सलफ़ ने की, और जो उन अक्वाम में भी मौजूद है, जिनको “पैगन-इज़म” या “कुफ़-ए-इल्हाद” (बेदीन, मुल्हिद) से याद किया जाता है। इसका ज़िक्र मैं आगे चलकर करूँगा। आखिर में, मैं “आयत-ए-कुरआनी” में “या अहले-किताब” की बजाए “या अहले-कुरआन” इस्तिमाल करके आप से यूँ मुखातिब होता हूँ:

يا اهل القران تعالوا الى كلمته سواء بينا وبينكم

जनाब-ए-मन-कुरआन आप लोगों को मसीह तक पहुँचाने के लिए उस्ताद है।

आईए, कुरआन की मानिए, और मसीह पर ईमान लाकर इस्लाम में दाखिल हो जाए, और मुसलमान कहलाइए, जैसे कि क़दीम अम्बिया और मसीह के हवारी “मुस्लिम” कहलाते रहे, और हम भी मुस्लिम हैं।

सफ़हा 10 पर आप लिखते हैं कि:

“अगर ये तस्लीम कर लिया जाये कि मसीह खुदा ना थे, और आज ईसाई दुनिया भी ये मानने को तैयार हो गई है, तो बहुत सा झगड़ा तै हो जाता है।”

मेहरबान मन, ये तो इस्लाम का एक जुज़्व (हिस्सा) है, जिसको कुर्आन ने तै कर दिया, अम्बिया ने इसकी तल्क़ीन की। यही बुनियादी बात है। आप मसीह की

ज़ात और अस्ल हैसियत का तो ज़िक्र करते हैं, मगर तहक़ीक़ात के मैदान से झट बाहर निकल जाते हैं, और मसीह की आम नब्वी हैसियत का दो-चार लफ़्ज़ों में बयान करके अस्ल मवाद को छोड़ते ही नहीं। तो भला हम कुर्आन की इस तालीम को और अम्बिया की तल्क़ीन को आपके कहने के मुताबिक़ छोड़कर कहाँ जाएं? क्या आप चाहते हैं कि हम इस्लाम की बातें छोड़कर काफ़िर हो जाएं?

जैसे आप लोगों ने इस्लाम की बातें छोड़ दीं। सुनिए, अब तो मुसलमान भी, जिनको मुसलमान नहीं, मुहम्मद कहना चाहिए, मसीह को ख़ुदा मानने लग पड़े हैं। चुनान्चे मौलवी सय्यद वहीद उद्दीन ख़ान आज़ाद अपनी किताब “हद तहक़ीक़ बह मुशरफ़ सुत्री” की फ़स्ल 3, सफ़्हा 4 में अपना एतिक़ाद सय्यदना मसीह के बारे में यूँ बयान करते हैं:

“मुख्तसरन अपना एतिक़ाद हम ये लिखते हैं कि किताब बाइबल यानी मजमूआ तौरैत व इंजील वग़ैरह का बहुत हक़ है, और सिलसिला अम्बिया बनी-इस्राईल में ख़ुसूसन ज़ात हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम की ऐसी मलकी सिफ़ात आम, ज़ाहिर न कुव्वत बशरी से बहुत ज़ाइद हैं। और सिवाए इसके चारा नहीं कि उनको हम एक आदमी मए-अल्लाह तस्लीम कर लें। और कुर्आन शरीफ़ में जो ज़िक्र उनका बलफ़ाज़ ‘कलिमतुल्लाह’ (كلمته الله) व ‘रूह अल्लाह’ (روح الله) के है, सो इस से ज़्यादा हम क्या कह सकते हैं? और तौरैत और ज़बूर वग़ैरह में पेशीनगोईयाँ निस्बत उनकी इस कस्रत से हैं कि क़ौम यहूद को ख़ुद इतिज़ार एक मसीह का है।”

मुझे अफ़सोस है कि जिन बातों को ख़ुदा के “कुल अम्बिया” मान और बता रहे हैं, और कुर्आन उ किताबों की तस्दीक़ करता है, और ख़ुद इन बातों की तल्क़ीन करता है, और आँजनाब ख़ुद भी दिल में क़ाइल हैं, जैसा आपकी ख़ामोशी और गुरेज़ बयान से अयाँ है, और फिर उनको ऐसी “क़दीमी रिवायत” से मन्सूब करना, “जिनका ताल्लुक़ पुराने कुफ़्र व इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) से था, और जो मसीह से हज़ारों बरस पहले ईरान, यूनान, बाबिल, नैनवा, कार्थेज, सिरिया, मिस्र, रूमा, मैक्सीको की क्रिस्से-कहानियों में दायरो-सायर थीं, वो हमारे प्यारे मसीह के नाम से मन्सूब कर दी गई हैं।” क्या बे-बुनियाद और बे-सनद मकूला नहीं है, जैसा मैं आगे चल कर मुफ़स्सिल ज़िक्र करूँगा? और क्या इन कुतुब मुक़द्दसा साबिक़ा को और ख़ुद कुर्आन को झूटा और ग़ैर-मुस्तनद करार देना नहीं है? क्या ये इख़्तिलाफ़ महज़ मुहब्बत और इख़्लास की बिना पर है? वाह साहब! हो तो इख़्तिलाफ़, और बिना उसकी मुहब्बत और इख़्लास, और फिर उसी इख़्तिलाफ़ को “तनाज़आत” और फ़साद कहना, सोने पर सुहागा, नहीं तो और क्या कहीं?

ख्वाजा साहब! मुझे तो आप की नेक नीयती और सादलोही पर बड़ा तरस आता है। मैं आप को किस तरह बताऊं! आप तो अस्ल बातों का इकरार भी करते चले जाते हैं, और उन से तरह भी दे जाते हैं। आप ये भी कह रहे हैं, और बार-बार कह रहे हैं कि "इस्लाम और ईसाइयत में एक किसिम का मुफ़ाहमा (समझौता) हो जाए, और इस्लाम में ऐसे मुफ़ाहमे के लिए बहुत कुछ मवाद मौजूद है।" और उन मवाद में से चंद एक का सरसरी ज़िक्र भी किये जाते हैं, मगर साथ ही इगमाज़ भी कर जाते हैं।

एक तरफ़ आपका ये कहना कि "ऐसी क़दीमी रिवायतें जिनका ताल्लुक पुराने कुफ़्र व इलहाद से था, वो हमारे प्यारे मसीह के नाम से मन्सूब कर दी गई हैं।" और इस के मुक़ाबले में दूसरी जगह ये फ़रमाना कि "मसीह की तालीम का जो नक्शा कुर्आन शरीफ़ पेश करता है, अनाजील-ए-अरबा भी करीब-करीब उसी की मुसद्दिक (सच्ची बताने वाली) हैं, वो तो इस्लाम की एक शकल है।" कहाँ तक ज़ेब देता है?

एक जगह तो आप सय्यदना मसीह के हक़ में फ़र्मते हैं कि "कुल तनाज़आत तो उनकी ज़ात के मुताल्लिक हैं।" मगर मुतालिबा करते हैं उनकी असली हैसियत के मुताल्लिक फ़ैसला कर लिए जाने का। क्यों नहीं उनकी ज़ात और हैसियत, दोनों को मुतहक्किक कर लेते, और उनकी ज़ात के मुताल्लिक फ़ैसला करने से क्यों जी चुराते हो?

और हम ने तो कुर्आन से, और एक सय्यद आलिम की ज़बान से फ़ैसला कर दिखाया। मानें ना मानें, आपका इख़्तियार है। ख़ैर, ख़ुदा त'आला की बारगाह में हमारी यही दरख़्वास्त है कि वो अपने नूर को मसीह के चेहरे से मुनअकिस करके ख्वाजा कमाल-उद्दीन के दिल पर डाले, ता वो भी मुनव्वर हो कर हक़ीक़ी मज़हब को, जो इस्लाम है और क़दीम से है और आलमगीर है, कुबूल करके फ़लाह-ए-दारैन हाल करे।



इस मज़मून में ख्वाजा कमाल-उद्दीन साहब ने दलील तशाबिह-बयना-अल-शैर्न (यानी दो चीजों में एक जैसी बात देखना) का इस्तिमाल करके, यानी दो चीज़ों पेगनइज़्म और मसीहियत में बाहमी मुशाबहत बताकर, अपने इस मज़'ऊमा (गुमान, तसव्वुर) के साबित करने की कोशिश की है कि मसीहियत का सब का सब कुफ़्र इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) की क़दीम रिवायत और दास्तानों से अख़ज़ किया हुआ है। दूसरे, ये कि सूरज की मुख़लिफ़ कैफ़ियात को मसीही मज़हब के तमाम मसाइल और वाक़ि'आत पर मुंतबिक्क (चस्प्या) करके ये बताया है कि:

“ज़रूरत-ए-वक़्त और ईसाई मज़हब को हर दिल-अज़ीज़ बनाने के ख़याल ने क़दीमी राहिबों को इस पर मज़बूर कर दिया कि वो क़दीमी मज़ाहिब कुफ़्र व इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) की रिवायत को जनाब मसीह और उन की वालिदा पर जूँ की तूँ चस्प्याँ करके लोगों को कह दें कि जनाब मसीह में उन के क़दीमी ख़ुदाओं ने ज़हूर किया। और इस तरह उस वक़्त के ग़ैर-मसीही लोगों को यक़ीन दिला दें कि ये कोई नया मज़हब नहीं, ये उनका ही क़दीमी मज़हब है, उनका ही ख़ुदा एक दूसरी शक़ल में आता है। चुनान्चे उसके कुल के कुल हालात भी वही हैं।” (सफ़हा 54)

मगर 55 वीं सफ़हा के इन अल्फ़ाज़ का कि “मुअरिख़ गिब्बन की भी ये राय है।” इस गुज़शता इबारत मज़कूर के साथ मुक़ाबला करने से मालूम होता है कि आपके ख़याल और राय की अस्ल बुनियाद मुअरिख़ गिब्बन की राय है। और इस पर आपकी हाशिया-आराई है, हालाँकि इस अम्र का आपने कहीं तारीख़ी सबूत नहीं दिया कि राहिबों ने ज़रूरत-ए-वक़्त के तक्राज़े से ऐसा किया, और ग़ैर-मसीही लोगों को ये यक़ीन दिला दिया कि ये कोई नया मज़हब नहीं है वग़ैरह।

इंजील नवीसों ने ऐसा अहले-यहूद के साथ तो किया और बताया कि मसीही मज़हब और मसीह वही है जो तुम्हारी तौरत और नबियों के सहीफ़ों और मज़ामीर (ज़बूर) में बतौर पेशीनगोई मज़कूर हुआ है। तुम्हारे ही अम्बिया की पेशीनगोइयों का तक्मिला मसीह और उस का मज़हब है। उन्होंने इस बात के सबब से अहले-यहूद के हाथों बड़ी-बड़ी तकालीफ़ और मसाइब भी बर्दाश्त कीं, मगर ऐसा कहने से बाज़ ना आए। बरअक्स इस के, आपके मज़'ऊम (तसव्वुर, गुमान) का तो उनकी किताबों में शाइबा (इशारा तक) भी पाया नहीं जाता। क्या आप किसी राहिब का, जिसने इंजीलें लिखी हैं, इस क़िस्म का कोई क़ौल पेश कर सकते हैं?

बाद के मसीही मुनादों ने भी अहले-यहूद के दर्मियान वा'ज़ करते हुए हर वक़्त कहा कि ये वही मसीह है जिसका तुम्हारी कुतुब-ए-मुक़द्दसा में ज़िक्र है। और अब भी वो यहूद में ऐसा करते हैं। मगर यूनानियों और रोमियों और दीगर अक्वाम में वा'ज़ करते हुए उन्होंने कभी आपके ख़याल-ए-मुहाल का इशारा भी नहीं किया।

तारीख़ से भी आपने कोई हवाला नहीं दिया। जैसा मुअर्रिख़ गिब्बन की ख़्याली राय थी, वैसा ही आपने भी बे सोचे-समझे वो कुछ कह दिया जो ख़ुद कहना ना चाहिए था। क्योंकि आपका तो ये ख़याल है कि ये बातें "चौथी सदी में, जब मसीहियत और शम्स-परस्ती का तसादुम हुआ, ईसाई मज़हब में दाख़िल हुई।" (सफ़्हा 84)

हालाँकि इस बात का भी कोई तारीख़ी सबूत नहीं दिया गया। फिर भी इस बयान से ये तो ख़्वाजा साहब की ज़बानी साबित हो गया कि चौथी सदी से पहले ये मिलावट ना थी। यानी उस वक़्त पहले का मसीही मज़हब बिल्कुल ख़ालिस था, जो इंजील में मौजूद है। और जो आपके बयान के मुताबिक़ करीब-करीब कुर्आन ही का नक़शा है।

और सफ़्हा 102 पर जो आप ने अपना यक़ीन ज़ाहिर किया है, उस से भी आपके मज़कूर बाला ज़ो'अम (तसव्वुर, गुमान) की तर्दीद होती है। कमाल-उद्दीन साहब लिखते हैं:

"इस में क्या शक़ है कि जनाब मसीह ख़ुदा के प्यारे नबी थे। ऐन ज़रूरत के वक़्त हज़रत मर्यम सिद्दीका के बतन से पैदा हो कर यहूदियों की इस्लाह के लिए आए। ज़रूरत-ए-वक़्त के लिहाज़ से बेहतर से बेहतर हिदायात दिए गए। आज भी उनकी बातें क़ाबिल-ए-इज़ज़त हैं।" उन के वक़्त के यहूदी उलमा रियाकारी और मुनाफ़क़त का मुजस्समा थे। उन के निफ़ाक़ को आप ने तश्त-अज़-बाम किया। जनाब मसीह के रब्बानी इल्म के मुक़ाबिल उनके इल्म का बाज़ार ठंडा पड़ गया। इन बातों से उलमा-ए-वक़्त आपके दुश्मन हो गए। उन्होंने आपकी तक़ज़ीब व तकफ़ीर की, तरह-तरह की अज़ीयतें पहुँचाईं। लेकिन जब वो ख़ुदा का नबी अपने फ़र्ज़-ए-मन्सबी से नारुका तो उन पर सडीशन का इल्ज़ाम लगाकर अदालत में खींचा गया। उन पर मौत का फ़त्वा हासिल करके उनको सलीब तक पहुँचाया गया। अल्लाह त'आला की हिक्मत-ए-बालिगा ने आपको इस लानती मौत से बचा कर आख़िरकार रिफ़अत-ए-रूहानी अता फ़रमाई। ये सब सही है, इस पर हम ईमान रखते हैं।"

इस से क्या मुतरश्शेह होता है? ये कि ख्वाजा साहब मसीह सय्यदना ईसा के तमाम वाक्कि'आत और रब्बानी तालीमात को हक़ और क़ाबिल-ए-इज़्ज़त समझते हैं। सिवाए इस एक अम्र के कि मसीह मस्लूब हो कर फ़ौत हो गए, दफ़न किए गए, और तीसरे दिन मुर्दों में से ज़िंदा हो गए, आस्मान पर सऊद फ़र्मा गए, और फिर क्रियामत में अदालत करने और सज़ा व जज़ा देने के लिए तशरीफ़ फ़रमाएँगे।

एक मुसलमान जो कुर्आन की तालीम से बख़ूबी वाक्किफ़ ना हो, या ख्वाजा साहब जैसा, हक़ाइक़ से आगाह हो कर भी उन से बे-एतिनाई और इग्माज़ कर जाए, इस से ज़्यादा और क्या अक़ीदा रख सकता है? मगर क्या वो इन तमाम उमूर को, जो इंजील शरीफ़ में आज मौजूद हैं, और जिनका मुख़्तसर तरीन ख़ाका ऊपर की इबारत में ख्वाजा साहब ने खींच दिया है, और जिनकी तफ़्सील इंजील में मौजूद है, कुफ़्र व इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) से मन्सूब करने की ज़स़ारत कर सकता है, तावक़्ते के वो तास्सुब के मर्ज़-ए-नुज़ूल, अलमा से, बीमार ना हो?

खुदा रहम फ़रमाए और ख्वाजा साहब को सीधी राह की तरफ़ रहनुमाई करे! फिर, उसी इक़्तिबास में जो इस मज़्मून के सदर में उन की किताब के सफ़्हा 54 से किया गया है।

ख्वाजा साहब ने तो ये कह दिया कि ज़रूरत-ए-वक़्त और ईसाई मज़हब को हर दिल अज़ीज़ बनाने के ख़याल ने क़दीमी राहिबों को इस पर मज्बूर कर दिया कि वो क़दीमी मज़ाहिब, कुफ़्र व इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) की रिवायत को जनाब मसीह और उनकी वालिदा पर जूँ की तूँ चस्पाँ करके लोगों को कह दें..... कि ये उनका ही क़दीमी मज़हब है!..... वगैरह मगर ये ना बताया कि वो "ज़रूरत-ए-वक़्त" क्या थी, और किस-किस राहिब ने किन-किन लोगों को ये कह दिया कि "ये उनका ही क़दीमी मज़हब है!"

क्या ख्वाजा साहब बता सकते हैं कि राहिबों के ऐसा करने से मसीही मज़हब अवाम में हर दिल अज़ीज़ बन गया था? अगर बन गया था, तो सवा तीन सदियों तक ग़ैर-मसीहियों, खुसूसन पेगनइज़्म, की तरफ़ से मसीहियों पर सख़्त से सख़्त ईज़ा-रसानियाँ क्यों रवा रखी गईं? क्या दूसरी-तीसरी सदी के मसीही उज़्र-ख़्वाहों ने ग़ैर-मसीहियों के मज़ालिम के मुक़ाबले में कभी कहा कि "ये कोई नया मज़हब नहीं, ये उन्हीं का क़दीमी मज़हब है, उनका ही खुदा एक दूसरी शक़ल में आता है," और इस बिना पर उन्होंने अपने माअज़िरत-नामों में ग़ैर-मसीहियों से अपील की हो कि "ईज़ा-रसानियाँ ना करो, बाज़ आओ, हम तुम एक हैं?"

क्या राहिबों की इस चालबाज़ी से ग़ैर-मसीहियों ने उनकी बातों का यक़ीन कर लिया था कि "हाँ, ये तो कोई नया मज़हब नहीं, ये उनका ही क़दीमी मज़हब है,

उनका ही खुदा एक दूसरी शकल में आया है?" और क्या वो गैर-मसीही लोग ये बातें सुनकर और मानकर मसीहियों को अज़ीयतें पहुँचाने से बाज़ आ गए थे?

हमें अफ़सोस आता है कि ख़्वाजा साहब ग़लत मुक़द्दमात जमाते जाते हैं और उन से सही नतीजा निकालने की कोशिश करते हैं। मगर सही नतीजा बरामद नहीं होता। फिर क्या, जब राहिबों ने ईसाई मज़हब को इस तरह हर दिल अज़ीज़ बना दिया, तो क्या उनकी इस से ये गर्ज़ थी कि वो अपने मज़हब को इस बिना पर छोड़कर मसीही हो जाएं? बल्कि इसके ख़िलाफ़ तो नतीजा ये निकला कि जब वो लोग अपने मज़हब को छोड़कर मसीही हो जाते थे, तो वो शेर के मुँह में पड़ जाते थे, और उनकी जान व माल ख़तरे में पड़ जाती थीं, जिसको वो बखूबी गवारा करते थे और हर क्रिस्म की अज़ीयतों के मुतहम्मिल (बर्दाश्त करने वाले) होते थे।

राहिबों की तो ये भी मुराद बर न आई। भला उनको और क्या फ़ायदा हुआ और कौन-सी ज़रूरत पड़ी? अगर ये ज़रूरतें ना थीं और ना पूरी हुई, तो ख़्वाजा साहब ज़रा सँभल के तो बात करते, अपनी बात के लिए कोई बुनियाद व तो रख लेते। रेत पर घर बनाइए, आपको क्या फ़ायदा पहुँचा?

मज़कूर बाला इक्तिबासात में जो कुछ ख़्वाजा साहब ने लिखा है, इस का ताल्लुक़ ज़हनियात से नहीं बल्कि वाकि'आत से है, या दूसरे लफ़्ज़ों में तारीख़ से है। और तारीख़ी उमूर के लिए तारीख़ी इस्बात होने चाहिए। ये नहीं हो सकता कि तारीख़ी बयान को तारीख़ से तो साबित ना करें और राय ही उसके सबूत में पेश करें।

आखिर राय-ज़नी के लिए भी तो बुनियाद कमोबेश तारीख़ी होनी लाज़िमी है, ताकि राय सिक्का (सही सनद) हो। जब किसी अम्र का तारीख़ी सबूत ही मादूम (गायब) है, तो राय खुद ही बे-नुमूद बे-सबूत ठहरी। लिहाज़ा बे-बुनियाद राय क्राबिल-ए-एतिबार व पज़ीराई नहीं।

अगर ये फ़र्ज़ कर लिया जाये, जैसा कि ख़्वाजा साहब ने दिखाया है कि मसीहियत और पेगनइज़्म में मुशाबहत-ए-कसीर पाई जाती है, तो इस से कोई और नताइज़ तो बरामद हो सकते हैं, मगर यह नतीजा किसी नहज से बरामद नहीं हो सकता कि ज़रूरत-ए-वक्त के लिहाज़ से राहिबों ने वो सब वाकि'आत मसीह और उनकी वालिदा पर चस्पॉ कर दिए।

कुछ तो पहले मज़मून में क़ब्लअज़ीं बयान कर दिया गया है, बाक़ी हस्बे-मौक़ा आगे चल कर बयान किया जाएगा। हम ख़्वाजा साहब से दर्याफ़्त करते हैं कि क्या मसीह का कुँवारी मर्यम से पैदा होना, और बे-बाप पैदा होना, मसीह का बेगुनाह होना, मसीह का कलिमतुल्लाह (खुदा का कलाम) और रूह-अल्लाह होना, ऐसे

मो'जिज़ात करना जिनका ज़िक्र कुर्आन और इंजील हर दो में मज़कूर है, मसीह का मस्लूब होना, और ज़िंदा होना, और सऊद-ए-समावी (आसमान पर उठाया जाना) वगैरह उमूर मुन्दरिज़ा इंजील व कुर्आन हर दो, कुफ़्र व इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) से अख़ज़ किए हुए हैं? तो फिर कुर्आन का बयान भी कुफ़्र व इल्हाद से हुआ? जिसको आप हरगिज़ तस्लीम करने को तैयार ना होंगे और ना ही हम ऐसा मानते हैं।

मज़कूर बाला इक़्तिबास में, सिवाए मसीह के मस्लूब होने और तीसरे दिन ज़िंदा होने और आस्मान पर चले जाने के, बाक़ी की तमाम इंजीली बातों को आप ने तस्लीम कर लिया और कह दिया है कि "ये सब सही है, इस पर हम ईमान रखते हैं।" लेकिन वही बातें कुफ़्र व इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) में भी हैं। तो आप उन पर भी ईमान रखते हैं?

जो बातें आज इंजील-ए-मुक़द्दस में हैं, वही हज़रत मुहम्मद के ज़माने में भी इसमें थीं। वही पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी सदी के इंजीली क़लमी नुस्खों में मौजूद थीं। पस जब कुर्आन ने इंजील की तस्दीक़ की, तो ये उसी इंजील की तस्दीक़ हुई जो उस वक़्त अहले-इंजील के हाथों में थी, और जिसमें वही बातें थीं जो आज की इंजीलों में मौजूद हैं, और कुफ़्र व इल्हाद (बेदीन, मुल्हिद) से भी मिलती हैं।

पस कुर्आन ने उसी इंजील की तस्दीक़ की जिसे आप मुत्तहिम (बदनाम) करते हैं। कैसे अफ़सोस की बात है कि ख़्वाजा साहब ने ज़रा दूर-अंदेशी से और नेक-नियती से काम नहीं लिया, और बिला-दलील व सबूत अपने मज़ऊमात (तसव्वुर) को मुरत्तिब करते चले गए और अस्ल व सही नतीजे की कुछ परवा ना की।

यनाबीअ-उल-मसीहियत के पढ़ने से, ख़ासकर इस ज़ेर-ए-गौर मज़मून से, बिल्कुल वाज़ेह होता है कि जो कुछ ख़्वाजा कमाल-उद्दीन ने मुखालिफ़त की है, वो कलीसी मज़हब की खासतौर पर है, ना कि इंजीली मसीहियत की मुखालिफ़त। चुनान्चे इस मज़मून की दूसरी सुर्खी भी "मसीही कलीसिया के माख़ज़ है", ना कि इंजीली मसीहियत के माख़ज़। और बार-बार फ़िक़्रह "कलीसी मज़हब" इस्तिमाल किया है, और उमूमन उन्हीं उमूर पर तन्क़ीद की है जो कलीसिया में माने जाते हैं, हालाँकि इंजील जलील में उनके मानने या ना मानने के बारे में कोई हुक्म नहीं और ना ही वो मसीही मज़हब की बुनियाद हैं, और ना ही उनका मानना हर मसीही को नजात के लिए ज़रूरी है।

मसलन, मसीह की पैदाइश, जी उठने और सबूत के दिन की बाबत बहस की है, हालाँकि इंजील ने ये नहीं बताया कि मसीह किस महीने की किस तारीख़ को पैदा हुआ था या किस तारीख़ को आस्मान पर गया। मगर ये तो बताया है कि मसीह फ़िल-हक़ीक़त सलीब पर मर गया और तीसरे दिन जी उठा और आस्मान पर सऊद

फ़रमाया गया। पस यही मानना काफ़ी और ज़रूरी है और इसी ईमान पर नजात का इन्हिसार है।

फिर सलीब के निशान की कलीसिया में तज़वीज के बारे में बहुत कुछ लिखा है कि फुलॉ सदी से पेशतर कलीसिया-ए-लिट्टेचर में ये निशान और इसका इस्तिमाल नहीं मिलता। ये चौथी ही सदी की ईजाद है, या बपतिस्मा के वक़्त मशरिक़ की जानिब मुँह करके खड़ा होना, या मगरिब से मशरिक़ की तरफ़ रुख़ करना, या रोमन कैथोलिक गिरजे में आल्टर का गोशा मशरिक़ में होना, या मनकों (राहिबों) और ननों (राहबात) का होना, या कैथोलिक पादरी की चांद में गोल टिकिया का होना, ईस्टर के दिन के तोहफ़ों में अंडों और "क्रॉस" केक यानी ऐसी रोटी जिन पर सलीब का निशान होता है, या ईसाइयों की क़र्बों पर सलीब की बजाए मछली की तस्वीर का होना, या आयरलैंड के खंडरों में से जो सलीब बरामद हुई है, उस पर एक शख्स का फांसी पर जड़ा हुआ नज़र आना और उसके सर पर कांटों के ताज का नहीं बल्कि ईरानी ताज का होना, वगैरह-वगैरह उमूर ऐसे वहमी और फुज़ूल हैं जिनकी कुछ वक़अत नहीं।

इंजील जलील में ऐसी बातों की जानिब इशारा तक नहीं, वो ईमानी उमूर में दाखिल भी नहीं। तो फिर उन को मसीही मज़हब के सर मुँढना और मसीही मज़हब पर त'अन करना, फुज़ूलियात में से नहीं तो और क्या है?

ऐसा मालूम होता है कि ख़्वाजा साहब के पास लोहे के तेज़ और ज़बरदस्त हथियार नहीं, बल्कि लकड़ी के हल्के हथियार हैं जिनसे आप मसीहियत और मसीहियों पर हमला कर रहे हैं, जो नबर्द-आज़मूदा (जंग के लड़ाको) के नहीं बल्कि बच्चों के खेलने के हथियार हैं। और ख़्वाजा साहब यही हथियार लेकर मैदान में निकले हैं और नहीं जानते कि जिन हथियारों को इस्तिमाल करके कलीसिया ख़राब हो गई "और उस ने अलल-ऐलान कह दिया कि कलीसिया उस वक़्त नफ़रतअंगेज़ है", उन्हीं को आप ख़ुद इस्तिमाल करके नफ़रतअंगेज़ बन रहे हैं।

मैं ऐसी बातों को मसीही मज़हब के हक़ में बिल्कुल बे-असर और फुज़ूल समझ कर, इनकी बहस में पड़ना नहीं चाहता और अपना क़ीमती वक़्त और मेहनत इन में सर्फ़ करने से ना तो खुश हूँ और ना माइल। हाँ, अलबत्ता इन दो बातों की तरफ़, कि अव्वल, मसीहियत के वाक़ि'आत और पेगनइज़्म में भी पाए जाते हैं और वहीं से अख़ज़ किए गए हैं; दोम, कि मसीहियत में सूरज की मुख़्तलिफ़ कैफ़ियात ही का नक़्शा पेश किया गया है, अपनी तवज्जोह लगाना, उन पर गौर व ख़ौज़ करना, और अपना क़ीमती वक़्त और मेहनत सर्फ़ करना अपना फ़र्ज़ समझता हूँ।

<p>□□ □□□□□ □□□□ □□□, □□□□□□ □□ □□ □□ □□□□-ए-□□□□ □□ □□□□ □□ □□ □□ □□□□□□ □□ □□□□ □□□□ □□□□ □□। □□□□ □□'□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□□ □□ □□□□।</p>	<p>मुजरिम थे, जिनमें से दो को सज़ा-ए-मौत दी गई और एक मुजरिम बरअब्बा नाम छोड़ दिया गया। और वो मसीह के साथ ना गया।</p>
<p>5. बा'अल को □□□□□□ □□ □□□ (□□□□□□ □□ □□□) □□ □□।</p>	<p>5. □□□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□□□ (□□□□□□) □□ ले गए।</p>
<p>6. □□'□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□ □□□ □ □□□□□ □□□□ □□ □□□□ □□ □□□□ □□□□।</p>	<p>6. □□□□ □□ □□□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□, □□□□□□□□ □□□□, □□□□□□□□ □□ □□□□, □□□□□□□□ □□□□ □□ □□□□, वगैरह-वगैरह।</p>
<p>7. बा'अल □□ □□□□□□ □□ □□□□ □□।</p>	<p>7. □□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□हि□□□□ □□□□ तक़सीम □□□□।</p>
<p>8. बा'अल □□ □□□□□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□□ □□ □□ □□□□ □□ □□□□□□। □□ □□ □□ □□□□ □□ पो□□□।</p>	<p>8. □□□□□ □□ □□□□□□ □□□□ (दिल □□ □□□□□□) □□ले का □□□□□□, □□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□□, □□□□ □□□□□□□□ □□ (□□□□□□□□ धो □□) मुश्क इत्र □□□□□□।</p>
<p>9. बा'अल पहाड़ी की तह में चला जाता है, जहां सूरज और रोशनी नहीं। वो ज़िंदगी से गायब हो जाता है।</p>	<p>9. मसीह चट्टानी क़ब्र में डाला जाता है, और वहाँ से वो आलम-ए-अम्वात में चला जाता है।</p>
<p>10. □□'अ□□ को □□□□□□ □□□□□□ □□□□ □□□□ □□ □□, उस □□ □□□□□ □□□□ □□□□।</p>	<p>10. □□□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□□ □□□□ □□□□</p>
<p>11. □□ □□□□□ बा'अल</p>	<p>11. □□□□□□ मग़दलीनी</p>

□□ □□□ □□□□□ □□।	□□ □□□□ □□□□□ □□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□□।
12. बा'अल को जिस जगह रखा गया था, वहां उसकी तलाश करते हैं। खासकर एक औरत रोती हुई क़ब्रिस्तान के दरवाज़ा पर उसकी तलाश करती है और रोते हुए कहती है, "मेरे भाई, मेरे भाई!"	12. मरियम मग़दलीनी क़ब्र पर मसीह की तलाश में आती है। क़ब्र को ख़ाली देखकर, रोते हुए कहती है, "मेरे ख़ुदावंद, को ले गए!"
13. बा'अल □□□ □□□□□ होता है □□ □□□□ □□ □□□□□ □□।	13. □□□□ □□□□□ □□ □□ □□□□ □□ □□□□□ □□।
14. इस वाक़िया की तक्ररीब पर बाबिल में मार्च के आख़िरी अय्याम में धूम-धाम से जलसा होता है, ख़ुसूसन इस अम्र के लिए कि बा'अल जुलमाती ताक़त पर ग़ालिब आया!!	14. ईस्वी दुनिया में उन्हीं दिनों अय्याम-ए-ईस्टर, जो ख़ुशी का तहवार मनाया जाता है, उसका भी मक़सद यही है कि मसीह उस दिन जुल्माती ताक़त पर ग़ालिब आया!!

"अब एक मुहक़िक़ अगर इंजीली दास्तान के वाक़ि'आत को बहुत हद तक बाबिली दास्तान से लिया हुआ ना समझे तो क्या कहे। बीस साल से ये बाबिली कहानी रोशनी में आ चुकी है, फ़ज़ला-ए-मसीहियत इसे देख और सुन चुके हैं। इस पर कोई मुख़ालिफ़ाना तन्कीद नहीं की गई। बिलफ़र्ज़ अगर ये दो वाक़ि'आत अम्र-ए-सलीब में मुतशाबेह होतीं तो तारीख़ तो बा'ज़ वाक़ि'आत दुहराया ही करती है। लेकिन यहां तो तारीख़ वही है, क़रीब-क़रीब कहानी वही है। फ़र्क़ है तो नाम और मुक़ाम का। फिर मौत और मौत से जी उठने की ग़र्ज़ एक ही है, यानी जुल्माती ताक़तें ख़ुदा के नूर पर ग़ालिब आना चाहती हैं और कुछ वक़्त के लिए उस पर ग़ालिब भी आ जाती हैं, हत्ता कि वो मिट जाता है और मिटने के बाद फिर जुल्माती ताक़तों पर ग़ालिब आ जाता है।"

"ये अम्र मुहक़िक़ हो चुका है कि बाबिल के लोग आफ़ताब-परस्त (सूरज की इबादत करने वाले) थे, और बा'अल उस क़ौम का

सूरज देवता था। वो लोग अय्याम-ए-बहार में ठीक उस दिन, जब दिन रात बराबर हो कर दिन बढ़ने लगता है, ये रस्म अदा करते थे, और यह सब कुछ थिएटर के रंग में होता था। बुख्तनसर के अय्याम-ए-हुकूमत में भी ये थिएटर हुआ करते थे, जो यहूदियों को कैद करके बाबिल में ले गया था, जहां इस्राईली असीर (कैदी) कई नस्ल तक गुलामाना हैसियत में रहे। इन थिएटरों को देखते रहे और वापसी पर इन क्रिस्ती को साथ लाए। इस वाकिये के अलावा तौरत और इस्राईली शिआर में जो बीसियों और बातें भी आफ़ताब-परस्ती की शामिल हो गई हैं, मगरिबी तहक़ीक़ ने उन सब को इसी वाकिये, बुख्तनसर और कैद-ए-इस्राईल, की तरफ़ मन्सूब किया है। किताब पैदाइश के वाकि'आत वग़ैरह सब के सब बाबिल से निकल आए।”

“अब ईसाई दोस्तो, अज़-रुए-इंसाफ़ आप खुद ही बतलाओ कि हम इंजीली वाकि'आत पर क्या राय-ज़नी करें। काश बाबिल के इस सूरज देवता के क़दीमी मज़हब, कुफ़्र व इल्हाद (पेगनइज़्म) में यही एक कहानी होती, मगर हम देखते हैं कि ज़हूर-ए-मसीह के वक़्त ईरान, बाबिल, नैनवा, कार्थेज, सिरिया, यूनान, रूमा, मिस्र, दीगर यूरोपियन ममालिक, ख़ुसूसन आयरलैंड और समुंद्रों पार मैक्सीको, सब जगह आफ़ताब-परस्ती होती थी। हिन्दुस्तान भी इस से खाली ना था। इन सब ममालिक में अपने-अपने हाँ (यहाँ) एक ना एक सूरज देवता था। उनके नाम, जैसा मैं पहले लिख चुका हूँ, हस्बे-ज़ैल थे, मथुरा (ईरान), बा'अल (बाबिल), आतीस (सरिया), इस्टार्टी (कार्थेज सरिया), एडोनिस (सीरिया), बेकस (यूनान व रोमा), हरक्युस (यूनान व रोम), होरस (मिस्र), ओसीरस (मिस्र), कटीज़ल-क़टल (मैक्सीको), अपालो (रूमा)। फिर या कि इन में से अक्सर बाकिरा (कुँवारी) के ही पेट से पैदा हुए हैं। तारीख़-ए-विलादत भी इन में से अक्सर की वही 25 से लेकर 27 दिसंबर तक की है, जिसे सूरज की कैफ़ियत से ताल्लुक़ है (जिसको मैं आगे चलकर बयान करूँगा)। फिर सब से बढ़कर इस बात को हम क्या करें कि इन में से बा'ज़ की मौत भी मसीह की मौत से मिलती-जुलती है। इन सब के मुताल्लिक़ भी यही अक़ीदा है कि वो नस्ल-ए-इन्सानी की नजात के लिए मरे। वो सब के सब अपने परस्तारों में नस्ल-ए-इन्सानी के नजात-दहिंदा और शफ़ी कहलाए। मसीह की तरह नस्ल-ए-इन्सानी की तालीम के लिए अक्सर सफ़र में रहे (ख़ुद लफ़ज़ “मसीह” के एक म'अनी बहुत

सफ़र करने वाला भी है)। इन की विलादत भी गार या किसी तहखाने में हुई। इन पर जुल्माती कुव्वतें गालिब आईं। वो मरे। दोज़ख़ या तहत-अल-शुरा में उतरे। मुर्दों में से जी उठे। वो अपनी जमाअत में मुरीदों को बपतिस्मा के ज़रीये दाखिल करते थे। उन में से बा'ज़ के शागिर्द भी बारह ही थे। उनकी याद में एक क्रिस्म की अशा-ए-रब्बानी भी होती थी।" सफ़हा 73 के हाशिया में मस्तूर है।

"नस्ल-ए-इन्सानी को मुसीबत और गुनाह की सज़ा से बचने के लिए खुदा या खुदा के बेटे का इन्सानी शक्ल इख़्तियार करना और अपनी कुर्बानी से नस्ल-ए-इन्सानी को नजात देना एक आम अक़ीदा मसीह से पहले हर-जगह मौजूद था, खुसूसन उन मज़ाहिब में जिसे आज ईसाई पेगनइज़्म कहते हैं। अतीस दरख़्त से बंधा हुआ है और उसके जिस्म में मेखें चुभी नज़र आती हैं। दरख़्त के नीचे एक बछड़ा दिखाया जाता है। (डेवपेस सफ़हा 255) एडोनिस की मौत के मुख्तलिफ़ (पहलु) बयान दिए गए हैं, लेकिन एक मुजस्समा में वो बतौर मस्लूब नजात-दहिंदा दिखाया गया है। उसकी मौत की याद में जो दिन मनाया जाता था, उसमें एक मुजस्समा को कफ़न में लपेटकर रोते-पीटते थे और वही बातें करते थे जो आज रोमन कैथोलिक गुड फ़्राइडे के दिन करते हैं। परवीथीन नस्ल-ए-इन्सानी के लिए कोह-ए-क्लाफ़ के दामन में पहाड़ से बाँधा जाता है। नाराज़-शुदा खुदा के कारकुन उसके हाथ-पांव में कीलें ठोकते हैं। वहां वो सलीब की तरह हाथ फैलाए नज़र आता है और कहता है, "उस की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ मुझे कोई नहीं बचा सकता।" (इस्कानीलस बेकस)। इब्रे ज्युपीटर (खुदा) भी इन्सानों की नजात के लिए मक्तूल होता है। सुरापीज़, मिस्र, के इब्रे-अल्लाह के मंदिर के खंडरात में एक सलीब पाई गई है। असीर (क़ैदी) क़त्ल होता है और उसके आज़ा-व-जवारिह अलग किए जाते हैं। फ़िल-जुम्ला देवताओं का नस्ल-ए-इन्सानी के लिए मस्लूब होना और सलीब का निशान नजात ठहराना मसीह के वक़््त और उसके बाद दो तीन सदियों तक ऐसा आम था कि राहिब मीनोस फ़िलप अपनी किताब "ओक्टोईस" में पेगन (मुश्रिक) लोगों को मुखातिब करके कहता है कि "हम लोग तो सलीब के परस्तार नहीं, ये तो तुम उसकी परस्तिश करते हो। तुम्हारे अलमों (झंडों) और हर एक बात पर सलीब का निशान है।" खुद टरटोलेन ने भी इस अम्र को तस्लीम किया है। वो अपालोज़िया में पेगन (मुश्रिक) को मुखातिब करके कहता है कि "तुम्हारे सब खुदा, तुम्हारे सब खुदाओं की तस्वीरें, सलीबों पर नज़र आती हैं। तुम्हारे सब अलमों (झंडों) पर सलीबें या मस्लूबों की शक्लें हैं।"

कटीज़ल-कटल की तस्वीरें भी मस्लूब ही नज़र आती हैं। और वो मौत नस्ल-ए-इन्सानी के गुनाह का कफ़ारा भी मानी जाती है। (किंगज़ सफ़हा 166, 167)“

मैंने ख़्वाजा साहब की किताब से इस क़द्र तवील इक़्तिबास किए हैं, सो इसकी वजह ये है कि क़ारईन-ए-किराम इस बात को बख़ूबी समझ लें कि पेगनइज़्म और मसीहियत में मुशाबहत कहाँ तक है, और कि वो इस नतीजे पर जल्द पहुंच सकें जो मैं उनके रूबरू पेश करता हूँ। इस से अगले सफ़हात में ख़्वाजा साहब ने इन्हीं उमूर पर मज़ीद तश्रीह की है और हर एक मज़कूर-बाला देवता का मुख़्तसर साल हाल बयान किया है जो क़रीब-क़रीब सब यकसाँ है। इक़्तिबास की ज़रूरत नहीं।

लेकिन अगर ख़्वाजा साहब का वो बयान, जिसका इक़्तिबास मैंने “असातीर-उल-अव्वलीन” के शुरू में किया है, मद्-ए-नज़र रखा जाये, और आपके इस क़ौल को कुछ वक़्त दी जाये कि:

“मसीह की तालीम का जो नक़्शा कुर्आन शरीफ़ पेश करता है, अनाजील-ए-अर्बा भी क़रीब-क़रीब जिसकी मुसद्दिक़ हैं, वो तो इस्लाम की एक शक़्ल है।” (देखो यनाबीअ-उल-मसीहियत सफ़हा 14)

तो एक मुंसिफ़-मिज़ाज मुक़ाबला-ए-मज़ाहिब करने वाले को इस अम्र से इन्कार करने की कोई गुंजाइश नहीं रहेगी कि जिस इस्लाम को मसीहियत पेश करती है, वही इस से पहले बाबिल की दास्तान में मौजूद है, मगर “मुश्रिकाना तबीअत” और “मुश्रिकाना रंग” में है।

और फिर उसके बाद कुर्आन की दास्तान में भी है, मगर यहां “इल्हाम-ए-इलाही इन्सानी हाथों से मग़शूश-शुदा (मिलावटी) है”, और ऐसा मग़शूश (मिलावट) हुआ हो कि इसे होश में लाना बहुत मुश्किल काम है। एक तरफ़ बाबिली दास्तान में मसीहियत बहुत साफ़-साफ़ नज़र आती है, मगर कुरआनी दास्तान में जो मसीहियत पाई जाती है, उस को इन्सानों ने, उस मुसफ़्फ़ा और पाकीज़ा पानी को, जो वही इलाही की शक़्ल में खुदा की तरफ़ से सब के लिए यकसाँ नाज़िल हुआ, मुख़्तलिफ़ आमैज़िशों से गदला कर दिया।” (सफ़हा 3)

ये वही “मज़हब-ए-हक्क़ा” है जो ख़्वाजा साहब के क़ौल के मुताबिक़ “नूह से लेकर सय्यदना मसीह तक हर क़ौम व मिल्लत को दिया गया” और सब से पहले उन क़ौमों को मज़हब की तरफ़ दावत दी, जिन्हें एक ना एक वक़्त खुदा की तरफ़ से कोई किताब पहुंच चुकी थी (सफ़हा 5)। हर क़ौम व मिल्लत में बाबिल, मिस्र,

यूनान वगैरह सब शामिल हैं। उन से ज़ाहिर होता है कि कल माक़ब्ल और माबा'अ के मज़ाहिब का मर्कज़ मसीहियत है, जो इंजील में है। मगर उस से ये साबित नहीं होता कि मसीहियत ने उन क़दीम अक़ाइद से लिया है। बिलफ़र्ज़ अगर आप की दलील तश्बीह को वैसा ही मान लिया जाये जैसा आपने मसीहियत के बारे में पाया है, तो साथ ही ये मानना पड़ेगा (आप ही की दलील की बिना पर) कि कुर्आन में जो मसीहियत है, वो अनाजील-ए-अर्बा से ली गई है, क्योंकि इन दोनों बयानात में बहुत मशाबहत पाई जाती है।

और जैसे बाबिल वगैरह ममालिक की दास्तानें मसीहियत से हज़ारों बरस पहले की हैं, वैसे ही मसीहियत कुर्आन से भी सैकड़ों बरस पहले की है। कुर्आन के बारे में तो बहुत ही इस्बात-ए-तारीख़ी पाए जाते हैं, जैसा कि यनाबीअ-उल-इस्लाम में मुन्दरज है। मगर मसीहियत के बारे में तो कोई तारीख़ी सबूत पेश नहीं किया गया जिससे आपकी दलील-ए-तश्बीह को ज़ोर हो सके। बल्कि तारीख़ी सबूत के बग़ैर तो दलील-ए-तश्बीह से ये नतीजा निकालना ही महज़ क्रियास और नामुम्किन मालूम होता है कि एक मज़हब दूसरे से, जो उस से पहले निकला है, लिया गया हो।

बरअक्स इस के, मसीहियत के बारे में कि इस के तमाम वाक़ि'आत बाबिली दास्तान से सैकड़ों बरस बाद, बजिन्सा, ख़ास मुल्क और ज़माने में मा'रज़-ए-ज़हूर में आए, तारीख़ी शहादात ग़ैर-मसीहियों की बहुत-सी मौजूद हैं। चुनान्चे मशहूर व मारूफ़ यहूदी मुअर्रिख़ फिल्यूस यूसुफ़ीस, जो 37 ई० में यरूशलेम में पैदा हुआ था और 100 ई० तक मौजूद था, अपनी किताब "Jewish Antiquities" की अठारहवीं किताब के तीसरे बाब की तीसरी फ़स्ल में सय्यदना मसीह के बारे में इस तरह लिखता है:

"अब करीब इसी वक़्त, येसू नामी एक दाना आदमी था, बशर्ते कि उसको आदमी कहना जायज़ हो, क्योंकि वो अजीब कलाम करने वाला था, ऐसे लोगों का उस्ताद जो खुशी से सच्चाई कुबूल करते हैं। उस ने यहूदियों और ग़ैर-क्रौमों हर दो में से बहुतों को अपने पास खींचा। वो अल-मसीह (अलिफ़-लाम खुतूत-ए-वहदानी में) था। और जब पिलातूस ने हमारे सरबरा-वरदा शख़्स की तहरीक व तज्वीज़ से उस पर सलीब का फ़त्वा लगा दिया था, जो लोग उसे पहले से प्यार करते थे, उन्होंने उसको ना छोड़ा। क्योंकि वो तीसरे दिन फिर ज़िंदा उन पर ज़ाहिर हुआ, जैसा कि इलाही अम्बिया ने उसकी बाबत ये और हज़ारों और अजीब बातें पेशीनगोई के तौर पर कही थीं। और मसीहियों का फ़िर्का, जो उस से मौसूम है, आज मादूम नहीं है।"

इस के अलावा इसके बयान से ज़ाहिर होता है कि जो हालात और वाकि'आत, और यहूदी और रोमी अफ़िसरों के हालात, जो इंजीलों और आमाल की किताब में मुन्दरज हैं, वो फ़िल-हक़ीक़त तारीखी हैं, ना कि जैसा ग़ैर-मसीही मुखालिफ़ीन कहते हैं कि पेगनइज़्म की दास्तानें और बनावटी क़िस्से कहानियां। (देखो Jewish Antiquities, किताबें 13 से 20)

अगर वो अपनी इस किताब के इन मुक़ामात में मसीह का नाम नहीं लेता या उसके पैरवान (मानने वालों) में से किसी का नाम साफ़ नहीं लेता, तो भी इस से ज़ाहिर है कि ये हिस्सा उसकी किताब का एक ग़ैर-मसीही क़दीमी मुअरिख़ की शहादत है कि जिन रोमी हुक्काम और यहूदी सरदार-काहिनों का ज़िक्र इंजील-नवीसों ने किया है, वो तारीखी तौर पर वही हैं, जिन्होंने मसीह की तारीख़ में बड़ा हिस्सा लिया।

मसलन, मासूम बच्चों का क़त्ल-ए-आम, हेरोदेस बादशाह की वफ़ात के बाद अज़-खिलाउस का यहूदिया में बादशाह हो कर आना, हेरोदेस इंटेपास का अपने भाई फ़ेलबोस की बीवी हीरोदियास से शादी कर लेना फ़ेलबोस की हयाते-हीने (जीते-जी) ही में, और इस बात से यहून्ना बपतिस्मा देने वाले से मलामत उठाकर उसको मुखय्यरस के क़िले में कैद कर देना और बाद में वहीं क़त्ल करवा डालना, फ़रीसियों और सदूक़ियों का हाल, यहूदी मुर्व्वजा रीत व रसूम और ईदों वग़ैरह का ज़िक्र, जो वो मुफ़स्सिल तौर पर करता है और जिनका बयान हमारी मौजूदा इंजील में पाया जाता है, वग़ैरह, ऐसे उमूर हैं, जो खुद और अपने मुताल्लिक़ा उमूर मुतज़क्किरा अनाजील व आमाल में तारीखी हैसियत रखते हैं। और बाहम ऐसी मुताबिक़त रखते हैं, कि तमाम इंजीली बयानात के अफ़सानवी होने और बाबिली क़दीमी दास्तान होने के सख़्त माने (रुकावट) हैं।

और इंजीली तारीखी उमूर की फ़िल-हक़ीक़त किसी ग़ैर-दास्तान या रिवायत से बिल्कुल आज़ाद और बेताल्लुक़ करते हैं, और अफ़साना नहीं, बल्कि हक़ीक़ी तारीखी उमूर होने का तारीखी सबूत है। अभी जो हवाला इस मुअरिख़ से ऊपर दिया गया है। इससे मसीह की उलूहियत इशारतन उस के मोअजज़ात, पिलातूस के अय्याम में मस्लूब हो कर मरने और तीसरे दिन ज़िंदा होने, और अपने शागिर्दों को नज़र आने का सरीह बयान पाया जाता है। यूसुफ़ीस के एतिक़ाद के मुताबिक़ ये सब बातें मसीह के हक़ में जो पूरी हुईं, वो थीं, "जो इलाही अम्बिया ने उसकी बाबत ये और हज़ारों अजीब बातें पेशीनगोई के तौर पर कही थीं।" मसीह और मसीहियों का मुफ़स्सिल बयान जो इस मुअरिख़ ने नहीं दिया, इसकी वजह ये थी कि अगरचे सैंकड़ों बरस तक मसीही मज़हब रोमी और यूनानी तौजिहात को अपनी तरफ़ खींचता रहा, तो भी जो यहूदियों के आम दस्तूर के मुवाफ़िक़ उस ने भी उन मुताल्लिक़ा वाकि'आत का ज़िक्र निहायत बुख़ल (कंजूसी) के साथ किया।

तासतस नामी एक रोमी मुअरिख, जो 78 ई० में रोमी शहनशाह वापशीन के अय्याम-ए-हुकूमत में उस का मशहूर मारूफ़ जरनैल था, रोमा की आतिशज़दगी की बाबत ज़िक्र करते हुए, और कि किस तरह कैसरो नीरू ने 64 ई० में इस आतिशज़दगी का इल्ज़ाम अपने ऊपर से उतारने के लिए मसीहियों के क़त्ल का हुक्म दिया था। उनका इस तरह बयान करना है, “इस तरह रिपोर्ट को ज़ाईल करने की गर्ज़ से नीरू ने उन लोगों को, जिन्हें अवामुन्नास उनके मख़्फ़ी (छिपी) जराइम की वजह से नफ़रत की निगाहों से देखते थे, अपने ही महल में मुजरिमों की तरह रखा और हर किसम के नए से नए मज़ालिम से सज़ा दी। वो उन को मसीही कहा करते थे।” मसीह जिसके नाम से मौसूम थे, तिबरियास के अहद में प्रोकियारेटर पितुस पिलातूस के ज़रीये मार डाला गया था, और वबाई वस्वसा थोड़े अर्से के लिए दब गया था। बाद ये ना सिर्फ़ यहूदिया ही में फूटने लगी, जहां ये शरारत पहले शुरू हुई, बल्कि रोमा में भी।

जहां तमाम अक्साम (मुख्तलिफ़ किसमें) की खूँ-रेज़ियाँ और गंदी, शर्मनाक बातें बाहम मिलतीं और फ़ैशनेबल बन जाती हैं। तब सबसे पहले किसी को गिरफ़्तार किया और इकरार करवाया जाता है। फिर उसकी इत्तिला पर एक जम्म-ए-ग़फ़ीर (बड़ी भीड़) ठहराई जाती थी। आतिशज़दगी के जुर्म में इस क़द्र नहीं, जिस क़द्र कि बनी नूअ इन्सान के नफ़रत के जुर्म में। और ना सिर्फ़ उन को मार ही डाला जाता था, बल्कि बड़ी बेइज़्ज़ती से मार डाला जाता था। या आग से जलाए जाने के लिए सलीबों पर बांध दिए जाते थे। और जब शाम हो जाती थी, तो रात को रोशन करने के लिए उन्हें जलाया जाता था। इस मुक़ाम में रोमी मुअरिख तासतस हस्बे-ज़ैल उमूर की ख़बर देता है, (1) तिबरियास की हुकूमत में पितुस पिलातूस नामी एक रोमी प्रोकियारेटर था, (2) उसके हाथों मसीह मार डाला गया था, (3) ये मसीह मसीही फ़िर्का का बानी था, (4) मसीहियों का आगाज़ यहूदिया में हुआ, (5) ये फ़िर्का बहुत जल्द रोमा तक फैल गया, (6) लोग इस फ़िर्के में इस सरअत के साथ शामिल होते थे कि रोमा की आतिशज़दगी के वक़्त मसीही जमाअत का हिस्सा, जो इस शहर में गिरफ़्तार हुआ था, उसे एक जम्म-ए-ग़फ़ीर (बड़ी भीड़) कह सकते थे।

फिर एक और रोमी मुअरिख और इलाक़ा बथोनियाह का गवर्नर, जो रोमी शहनशाह तिराजान के अहदे हुकूमत में ज़िंदा था, जिसका नाम छोटा पलीती था, इस शहनशाह को एक ख़त लिखता है, जिसमें वो मसीहियों के साथ सुलूक किए जाने के बारे में उस से मश्वरा तलब करता है। ये शख्स 113 ई० के करीब फ़ौत हो गया था। ख़त का वो हिस्सा जो हमारे मतलब का है, हस्बे-ज़ैल है:

“ऐ शहनशाह, मेरा ये दस्तूर रहा है कि वो तमाम बातें तुझसे पूछ लिया करता हूँ जिनमें मुझे कुछ शक पड़ जाया करता है। जब मेरे सामने कोई रोक आ जाए तो कौन मेरा बेहतर हादी हो सके, या

जब मैं नावाक़िफ़ हूँ तो कौन मुझे रोशन कर सके? मसीहियों की तहक़ीक़ात में मैंने कभी हिस्सा नहीं लिया। लिहाज़ा मैं नहीं जानता कि वो क्या ज़राइम हैं जिनकी उनको उमूमन सज़ा दी जाती है, या तहक़ीक़ात कैसे जाती है, या कौन-कौन सी रिआयतें की जाती हैं। पस मुझे ख़फ़ीफ़ से ख़फ़ीफ़ इल्म भी ना हुआ करता था कि आया उम्र का कोई इम्तियाज़ है या नहीं, या निहायत ख़फ़ीफ़ मुजरिमों को ऐसी सज़ाएं दी जाती थीं जैसी ज़्यादा सख्त मुजरिमों को हुआ करती थीं। जो लोग तौबा करते थे, उन को माफ़ किया जाता था या कि नहीं, या किसी शख्स को जो पहले मसीही था, मगर बाद में मसीही ना रहा, उस को कुछ फ़ायदा भी पहुँचता था या नहीं। आया सज़ा सिर्फ़ नाम ही के सबब से दी जाती, मगर मख़फ़ी (छिपी) जुर्म कोई ना होता, या उन मख़फ़ी (छिपे) ज़राइम की सज़ा दी जाती थी जो उस के नाम से मुताल्लिक़ होते थे। इस असना (वक़्त) में उन लोगों के साथ, जो बतौर मसीही मुजरिम होकर मेरे रूबरू आते थे, मेरा यही तरीक़ा रहा, मैं उन्हीं की ज़बान से पूछ लिया करता था कि "क्या तुम मसीही हो? अगर वो इक़रार करते, तो मैं सज़ा का डर दोहरा कर दूसरी और तीसरी बार पूछ लिया करता था। अगर वो उसी पर अड़े रहते, तो मैं उनके क़ल्ल का हुक़म दे देता था। क्योंकि मैं उन से कभी नहीं पूछता था कि जिसका तुम इक़रार करते हो, वो बात क्या है। बहर-सूरत, गर्दनकशी और ना झुकने वाली शरारत मुस्तौजिब सज़ा हैं। इसी किस्म की दीवानगी के और लोग भी थे, लेकिन चूँकि ये रोमी शहरी थे, इसलिए मैं उनको नोट कर लिया करता था कि उन्हें रोमा को भेज दूँ, उन्हें कार्यवाइयों के सिलसिले में, जैसा कि अक्सर हुआ करता है। ये जुर्म जिसका नोटिस लिया जाता था, आम हो गया था, और मुत'अद्दद अलग-अलग मुक़द्दमात बरपा हो जाया करते थे। एक का उज़्र पेश किया जाता था, जिसमें बहुत से नाम हुआ करते थे, मगर दस्तख़त कोई ना होता था। और जबकि वो मेरे पीछे-पीछे देवताओं से दुआ माँग लेते और ख़ुशबू और शराब आपके बुत पर नज़्र गुज़ार कर उस से मिन्नत व समाजत करते, जिसको मैं देवताओं की मूरतों के साथ इसी मक़्सद से अदालत में मंगवा लिया करता था, और कि वो मसीह के पर लानत कर दें। हालाँकि जिन बातों में से एक भी (ऐसा ही ये कहा जाता है) वो नहीं कर सकते थे जो सच-मुच मसीही थे। तो मैं ख़याल करता था कि उनको छोड़ देना दुरुस्त है। दीगर अशख़ास, जिसका नाम मुख़्बिर बताता था, कहते थे कि हम मसीही थे, मगर उस वक़्त उस से इंकारी हो जाते थे। और यह

बयान देते थे कि हम मसीही तो थे, मगर अब नहीं हैं। बा'ज़ कहते थे कि इस बात को तीन साल का अर्सा गुज़र चुका है। बा'ज़ कि खासे बरस गुज़र चुके हैं। मगर मादूद-ए-चंद ऐसे थे जो कहते हैं कि हमें मसीहियत को छोड़े बीस बरस गुज़र चुके हैं। ये सब लोग आपकी बुत की और देवताओं की मूर्तों की ना सिर्फ परस्तिश ही किया करते थे, बल्कि मसीह पर लानत भी किया करते थे। मगर वो मसरूर होते थे कि हमारा क़सूर या ग़लती यह है कि उनकी यह आदत है कि एक मुक़र्ररा दिन पर रोशनी निकलने से पहले वे जमा होते और बारी-बारी मसीह का ऐसा गीत गाते कि वो खुदा का दिया एक खुदा है। और क़सम खाकर आपस में इकरार करते कि हम कोई हल्लाफ़ काम नहीं करेंगे, मगर चोरी, क़ज़्ज़ाक़ी (लूटमार) या हरामकारी से परहेज़ करेंगे, और जब कोई अमानत वापस लेने आए तो देने से इन्कार नहीं करेंगे। जब ये कर चुकते तो अपने दस्तूर के मुताबिक़ वे रवाना हो जाते। और फिर आम और पाक खाना खाने के लिए फ़राहम हो जाते थे और (उन्होंने कहा) कि उन्होंने मेरे फ़र्मान के जारी होने के बाद ऐसा करना तर्क कर दिया है, जिसमें आपके हुक्मों के मुताबिक़ जारी करके मज्लिसों की मुमानियत कर दी थी। इस बात पर मैंने दो ज़नाना मुलाज़िमों से (जो ख़ादिमा कहलाती थीं) अज़ीयत के साथ दर्याफ़्त करना ज़रूरी समझा कि ये मुआमला कहाँ तक सच है, मगर मुझे यही मालूम हुआ कि ये उल्टी-पुल्टी बातें और फ़ज़ूल वस्वसा के सिवा और कुछ नहीं है। पस मैंने मुक़दमा को मुलतवी कर दिया। और आप से ये मश्वरा करने में शताबी की मैं समझा कि इस मुआमले में मश्वरा लेना ही ज़रूरी है, खासकर उनकी तादाद की वजह से जो खतरे में हैं। क्योंकि हर उम्र और हर मर्तबा और मज़ीद बरां मर्दों-ज़न हर दो में से बहुत से अभी बुलाए गए हैं और बुलाए जाएंगे कि मुक़दमे की जवाबदेही करें। क्योंकि ये वस्वसा न सिर्फ़ शहर में बल्कि दिहात और इलाक़े में भी फैल गया है। तिस पर भी इसको रोक देना और दुरुस्त कर देना मुमकिन मालूम होता है। बहरनहज ये यक़ीनी अम्र है कि करीबन सब के सब उजड़े हुए मंदिर बहाल हुए और मज़हब की रीत व रसूम जो मुदत से ग़ैर-मुस्तअमल थीं, अब बहाल होने लगी हैं और कि बाज़ार में कुर्बानी के जानवरों के लिए चारा तो है। मगर ख़रीदने वाले अभी तक बहुत कम हैं। इससे ये बात ब-आसानी समझी जा सकती है कि आदमियों की किस क़द्र भारी जमाअत की इस्लाह हो सकती है अगर उन्हें तौबा का मौका दिया जाए।”

पालीनी की इस शाहादत (गवाही) से ये उमूर सादिर होते हैं:

(अ) मसीही लोग मसीह की बतौर खुदा परस्तिश किया करते थे और दूसरे देवताओं की इबादत करने से इन्कार करते थे। इस तरह वो ये ज़ाहिर करते थे कि सिर्फ़ वही परस्तिश के लायक़ है।

(ब) अगरचे नाफ़रमानी की सज़ा बार-बार मौत की धमकी से दी जाती थी, तो भी रोमी शहरियों और दीगर लोगों की बड़ी तादाद मसीह का इन्कार और देवताओं की इबादत करने से मुन्किर थी। पालीनी उन से तीन बार मुतवातिर सवाल करने से उनको ख़ासा वक़्त दे देता था कि वो अपनी जान बचा लें। और जब वो उनकी झुकने वाली शरारत पर ग़ालिब ना आ सकता, तो उन के मार डाले जाने का हुक्म दे देता था।

(ज) उनकी रीत व रसूम की बाबत हम ये सुनते हैं कि वो एक मुकर्ररा दिन पर आम इबादत किया करते थे। सुबह की इबादत में वो मसीह को खुदा जान कर हम-नवाज़ी के साथ उसके गीत गाते थे और कलाम और काम में हर किसम की नापाकी और बद-दियानती से बचने के लिए आपस में अहद किया करते थे। दिन में मिलकर खाना खाने के लिए फिर इखट्टे हुआ करते थे।

(द) यहां से ये मालूम होता है कि मसीही पितुस और बथोनिया में सुरअत के साथ फैल गए थे। इस मज़हब के बानी की वफ़ात को बमुश्किल पछहत्तर (75) बरस गुज़रे थे कि मसीही मज़हब ने इन सूबों पर ऐसा क़ब्ज़ा कर लिया था कि मंदिर उजड़ गए थे और कुर्बानियां तक्ररीबन मौकूफ़ (ख़त्म) हो गई थीं। ये मज़हब किसी एक जमाअत या मुक़ाम ही में महदूद ना था, बल्कि शहरों और दिहात में घुस गया था, हत्ता कि ख़ूब फैले हुए और आबाद इलाक़े में फैल गया था। ऐसा कि रोमी शहरियों और रोमी रिआया, मर्द व ज़न और हर मर्तबे के लोग इस मज़हब के पैरौओं (मानने वालों) में शामिल थे, जिनमें से बा'ज़ बीस-बीस बरस के मसीही थे। (देखो शमुएल ई° स्टोक्स साहब की किताब "दी गॉस्पल अकोर्डिंग टू दी ज्युज़ एंड पेगीन्ज़) वगैरह।

इन रोमी मोअरिखों और अहकाम के मज़कूर-बाला बयानात से अनाजील-अरबा और आमाल-उर-रसुल के बड़े-बड़े बयानात की कमा-यनग़बी तस्दीक़ होती है। और यह ज़ाहिर होता है कि इंजील अस्ल और ऐन पहली सदी मसीही में ही मौजूदा थी। इसके बयानात कहीं से लिए हुए नहीं हैं। मसीह के बारे में अक़ीदा भी वही होता है जो आज अहदे-जदीद में मौजूद है। और बावजूद हुक्काम और अवाम की तरफ़ से सख़्त मुखालिफ़त के, वो अपने अक़ीदे से मुन्किर ना हुए। इंजीली बयानात तारीखी हैं, अफ़सानवी नहीं। जो कुछ उन्होंने सुना और अपनी आँखों से देखा, बल्कि गौर से देखा और अपने हाथों से छुआ। ऐसा कि किसी किसम के शक-ओ-शुब्हा की गुंजाइश ना रही। उन्होंने इसकी गवाही दी। (1 यूहन्ना 1:1-2)

उन्होंने ने महज़ खयाल से या किसी तक़लीद से इंजील नहीं लिखी। किसी दुनियावी गर्ज़ से या लोगों को दुनियावी लालच के या मसरत-बख़्श अफ़साने बनाकर या हर दिल अज़ीज़ बनाकर इंजील नहीं लिखी। अगर इंजील-नवीस इस गर्ज़ से इंजील लिखते कि उस वक़्त के ग़ैर-मसीही लोगों को यक़ीन दिलाएँ कि ये कोई नया मज़हब नहीं, ये उनका ही क़दीम मज़हब है, उनका ही ख़ुदा एक दूसरी शक़ल में आता है।" (यनाबीअ-उल-मसीहियत, सफ़हा 54) तो बिल-ज़रूर उस वक़्त के मसीही कुछ ऐसे ही अल्फ़ाज़ कह कर हुक्काम और रिआया से अपील करते और जान-ओ-माल के ख़तरे से बच जाते, देवताओं की इबादत करने से कभी इन्कार ना करते, और ग़ैर-मसीही भी इस अम्र को बसरो-चश्म तस्लीम कर लेते। और यूं बाहमी निफ़ाक़ और इज़ार-सानी से बाज़ आकर इतिहाद और अमन-चैन हासिल कर लेते। ज़माने की ज़रूरत तो रफ़ा ना हुई, बल्कि मसीही मज़हब की इशाअत से तो बाहमी जुदाई और फ़साद बढ़ गया, और सय्यदना मसीह के क़ौल के मुवाफ़िक़ "तलवार चल गई", और आदमी के दुश्मन उसके घर ही के लोग हो गए। उस वक़्त की तारीख़ में ख़्वाजा साहब के खयाल का खयाल भी नहीं पाया जाता।

एँ खयाल □□□□ वो □□□□ □□□□□

ये तो उन रोमी हुक्काम और मोअरिखों की तारीख़ी शहादत में से मुश्ते-नमूना अज़ ख़रवारे (ढेर में से चंद मिसाल) हदिया नाज़रीन कर दिया गया है। लेकिन अब मसीही मज़हब के सबसे क़दीम ग़ैर-मसीही मुख़ालिफ़ों की मुख़ालिफ़त और मसीहियत पर सख़्त तरीन हमला कुनुन्दगान में से सिर्फ़ एक का ज़िक़्र किया जाएगा। और जिन उमूर पर उस ने हमला किया है, वो मुख़्तसर तौर पर और बा/ज़ औकात उसी के लफ़ज़ों में यहां दर्ज करते हैं। सो वाज़ेह रहे कि सल्स नामी एक अफ़कूरी फ़िर्का का यूनानी फ़ैलसूफ़ और आलिम, फ़ाज़िल मसीहियत का निहायत ख़ौफ़नाक मुख़ालिफ़ दूसरी सदी में गुज़रा है। उसकी इस मुख़ालिफ़ाना किताब का नाम "सच्चा मुनाज़रा" है।

ये किताब उस वक़्त मादूम (गुम) थी और अब भी दस्तियाब नहीं हुई। मगर तीसरी सदी मसीही के एक निहायत आलिम, फ़ाज़िल बुजुर्ग ओरेजन नामी के इस जवाब से पता लगता है जो उसने सल्स की इस किताब का लिखा है। लेकिन चूँकि ओरेजन बुजुर्ग अपने मुख़ालिफ़ के अल्फ़ाज़ इक़्तिबास करता है और हर बात का बतद्रीज जवाब देता है, तो उसके जवाब से सल्स की अस्ल किताब तक़रीबन पूरी की पूरी निकाली जा सकती है।

यहां सल्स की किताब ओरेजन के जवाब से तक़रीबन अस्सी बरस पेशतर, या क़रीब 170 ई० में लिखी गई थी। चुनान्चे सल्स मसीह के बारे में कहता है कि "वो जो हाल ही में लोगों के दर्मियान ज़ाहिर हुआ" (8:12)। वो मसीह के बारे में कहता

है कि “थोड़ा ही अर्सा गुज़रा है कि उस ने अपनी इस तालीम की तल्कीन शुरू की, और मसीही उस को खुदा का बेटा तसव्वुर करते थे” (1:26)। सल्स बताता है कि “जिन तालीमात पर मैं हमला करता हूँ, वो मसीहियों की किताबों में पाई जाती हैं” (2:74)। वो तजस्सुम की तालीम पर एतराज़ करता है (4:2 से 30)। वो यूसुफ़ को नज्जार कहता है (5:52)। वो मजूसियों का भी ज़िक्र करता है जो मसीह की बतौर खुदा परस्तिश करने आए थे (1:58)। वो मसीह के मिस्र को भाग जाने का भी ज़िक्र करता है (1:66; 5:52)। हेरोदेस के ज़रीये बच्चों के क़ल्ल-ए-आम किए जाने की तरफ़ इशारा करता है (1:58)।

मसीह के बपतिस्मा के वक़्त जो उस पर कबूतर की शकल में रूह-उल-कुद्स नाज़िल हुआ था, उस पर हमला करता है (1:41) और बताता है कि उस वक़्त आस्मान से एक आवाज़ आई थी, जो या कहती थी कि मसीह खुदा का बेटा है (1:72)। और मसीहियों के इस अक़ीदे पर एतराज़ करता है कि वो मसीह को खुदा का बेटा मानते हैं (2 का पहला निस्फ़, 6:72, 74, 8:14 वग़ैरह)। मसीह की तालीमात का बयान करके वो कहता है कि “नासरत के आदमी ने इन (यानी मूसा की शरीअतों) के ऐन ख़िलाफ़ अपने क़वानीन की तशहीर की, ये कहते हुए कि कोई शख्स बाप के पास नहीं आ सकता। जो कुद्रत या दौलत या इज़्ज़त को प्यार करता है, कि इन्सान को लाज़िम नहीं कि वो कव्वों से बढ़कर अपनी ख़ुराक की फ़िक्र करें। कि उन को अपनी पोशाक की बाबत सोसनों से भी कम परवाह करनी चाहिए। कि जिसने उन को एक मुक्का मारा है वो उस को दूसरा भी मार लेने दें” (7:18)। वो इस आयत का इक़्तिबास करता है कि “जो तेरी एक की गाल पर तमांचा मारे, दूसरा भी उस की तरफ़ फेर दे” (7:58)। मसीह के पैरौओं की बाबत कहता है कि वो महसूल लेने वाले और मल्लाह थे (1:62), और कहता है कि “उन्होंने उस को छोड़ दिया और गिरफ़्तार करवा दिया, जो उसके हम-मज्लिस थे और तमाम चीज़ों में शरीक थे, और उस को अपना उस्ताद समझते थे और बचाने वाला और खुदा-ए-अकबर का बेटा तसव्वुर करते थे” (2:9)।

मसीह की जान-कनी की तरफ़ हिक़ारत इशारा करता है, और उसकी इस बात का इक़्तिबास करता है कि “ऐ बाप, अगर मुम्किन है तो ये पियाला मुझसे गुज़र जाये” (2:24)। मसीह को “येसू मस्लूब” कहता है (2:36)। जिन लोगों ने उसे मस्लूब किया, वो कहता है कि “ये वो लोग थे जिन्होंने तुम्हारे खुदा को सलीब दी” (8:41)। मसीहियों के इस अक़ीदे पर एतराज़ करता है कि “मसीह ने बनी-नूअ इन्सान के फ़ायदे के लिए ये मुसीबतें सही” (2:38)। मसीह के मुर्दों में से जी उठने की हक़ीक़त की तर्दीद करने की कोशिश करता है (2:59, 70)। उन फ़रिश्तों की तरफ़ इशारा करता है, जिन्होंने क़ब्र पर से पत्थर ढलकाया था (5:52), और जिसके जी उठने की बाबत जो मसीहियों का अक़ीदा है, उसकी बेवकूफ़ी ज़ाहिर

करने की सई (कोशिश) करता है (4:14)। मसीहियों के इस कहने पर तमसखर (हँसी) उड़ाता है कि "दुनिया मेरे लिए मस्लूब हुई और मैं दुनिया के लिए" (5:64)।

मसीहियों का मसीहियत से इन्कार करने की निस्वत निहायत सब्र और जोश के साथ मौत का मुक़ाबला करने का इशारा करके (8:48) सल्स कहता है कि "अलावा इसके, तुममें क्या ये एक बहूदा और बे-रब्त बात नहीं है कि एक तरफ़ तो तुम जिस्म को इस क़दर बड़ा समझते हो, ये तवक्क़ो करते हो कि यही जिस्म फिर जी उठेगा, गोया कि तुम्हारा निहायत ही उम्दा और बेश-क़ीमत हिस्सा है। और फिर दूसरी तरफ़ उस को ऐसी अज़ीयतों के हवाले करते हो, गोया वो किसी काम का नहीं है" (8:49)।

मसीहियों के सताए जाने की तरफ़ इशारा करके सल्स कहता है, "जनाब-ए-मन, आप ये नहीं देखते कि ना सिर्फ़ तुम्हारे खुदा को (मुराद मसीह है) बुरा कहा जाता है, बल्कि हर बहरूबर से जिलावतन किया जाता है। और तुम खुद, जो कि गोया एक बुत हो, जो उसके लिए मख़सूस किए गए हो, बांध दिए जाते हो और सज़ा-याबी के लिए ले जाए जाते हो, और लकड़ी से बांधे जाते हो, जबकि तुम्हारा खुदा, या जैसा कि तुम उसे कहते हो, खुदा का बेटा, बदकार से उसका बदला नहीं लेता?" (8:35)।

(देखो स्टोक्स साहब की किताब महुला बाला, सफ़हा 46 से 49)

सल्स के इन इक्तिबासात से जो पहली बात ज़हन के सामने आती है, वो यही कि जो तारीख़ी और तालीमी उमूर और अक़ाइद मसीहियों की उस वक़्त की मसीही मुक़द्दस किताबों, यानी इंजील, में मौजूद थे, यानी 170 ई० में और उस से पहले, वही आज इस इंजील में पाए जाते हैं जो हमारे हाथों में है। सल्स मसीहियत के आगाज़ से बहुत ही नज़दीक का और उसी मुल्क का, जिसमें मसीहियत ने जन्म लिया, निहायत ही आलिम, फ़ाज़िल और वाकिफ़-कार मुखालिफ़ मसीहियत का था, और खुद भी बुत-परस्तों में से था। उस को तो ये भी ना सूझी कि मसीहियत का सरचश्मा पेगनइज़्म है, और कि "ज़रूरत-ए-वक़्त और ईसाई मज़हब को हर-दिल-अज़ीज़ बनाने के खयाल ने क़दीमी राहिबों को इस बात पर मजबूर कर दिया कि वो क़दीमी मज़ाहिब-ए-कुफ़्र व इलहाद की रिवायत को जनाब मसीह और उनकी वालिदा पर ज्यों की त्यों चस्पाँ करके लोगों को यह कह दें" ... वग़ैरह।

मगर हमारे मेहरबान और "महज़ मुहब्बत और इख़्लास की बिना पर हमसे इख़्तिलाफ़ रखने वाले" ख़्वाजा कमाल-उद्दीन को, जो मसीहियत से करीब दो हज़ार बरस का और सैकड़ों मीलों का और हर क्रिस्म का बाद रखते हैं, बहुत दूर की

सूझी। भला ख़्वाजा साहब करते तो इस से ज़्यादा क्या कर सकते थे कि यूरोप के मुहक़िक़ीन की तहक़ीक़ात का, जैसे कि उन्होंने ग़लत नतीजा निकाला, मुतनब्बाह (आगाह किया) करते हुए ये ग़लत नतीजा निकालते कि “बहुत-सी ऐसी क़दीमी रिवायतें, जिनका ताल्लुक़ पुराने कुफ़्र व इलहाद से था... वो हमारे प्यारे मसीह के नाम से मन्सूब कर दी गई हैं।” और तुरा ये कि अपने इस दावे के लिए कोई तारीख़ी सबूत नहीं देते। और भला बेचारे बता भी क्या सकते थे, जब खुद उन्हीं को मालूम नहीं जिनकी अंधी तक्लीद आप खुद कर रहे हैं। पस जिसकी बुनियाद ग़लत, तो उसी का मुतनब्बी भी ग़लत।

देखिए साहब, ख़्वाजा साहब का इल्म-ए-बलीग़ कहाँ तक बढ़ा हुआ है, जबकि वो फ़र्माते हैं कि:

“इंजील तौरत के सिवा किसी और किताब में मसीह का पता नहीं चलता। हाँ, मूदी मुअर्रिख़ यूसुफ़ीस की तारीख़ में एक-आध वर्क़ मसीह के हालात की तरफ़ इशारा करता है, लेकिन वो वर्क़ आज खुद अरकान-ए-कलीसिया के नज़्दीक़ भी जाली साबित हो चुका है।” (यनाबीअ-उल-मसीहिहियत, सफ़हा 23)

इस किताब का हवाला भी मैं क़ब्बल-अज़ीं दे चुका हूँ, जिसमें मसीह का ज़िक़्र आया है। और अगरचे ख़्वाजा साहब ने अल्फ़ाज़ तहत-उल-ख़त में महज़ अरकान-ए-कलीसिया के बिला-सबूत इस कहने की तक्लीद करके यूसुफ़ीस मुअर्रिख़ के बयान को ग़ैर-मोअतबर ठहराने की कोशिश बेफ़ाइदा की, लेकिन अगर हम बफ़र्ज़-ए-मुहाल आपकी इस तक्रीर को मान भी लें, तो क्या रोमी मोअतबर और मुअज़्ज़िज़ अहकाम की उन किताबों में, जिनका मैंने ऊपर ज़िक़्र किया है, मसीह का ज़िक़्र नहीं है? क्या सल्स की सख़्त मुख़ालिफ़ाना किताब में मसीह का और मसीहियों और उनके अक़ाइद का मुफ़स्सिल ज़िक़्र नहीं है?

जनाब-ए-मन! वो तो आपसे भी ज़्यादा झुफ़्र (गहराई), निगाह और नुक्ता-चीं और वाक़िफ़-कार आलिम था। उस ने तक्रीबन मसीह और उसकी तालीमात और मसीहियों और उनके मोतक़िदात का वही पूरा-पूरा और मुकम्मल नक्शा खींचा है, जो आज हमारे पास इंजीलों में मौजूद है, जो मैंने ऊपर पेश कर दिया।

इस के अलावा इसी ज़माने के चंद एक और भी यहूदी और ग़ैर-मसीही मुसन्निफ़ों की किताबें हैं, जिनसे मसीह का वही नक्शा खींच सकते हैं जो इंजील में है। मसलन स्वामोसाटा का बाशिंदा लोशीन, जो 100 ई° में पैदा हुआ था, उसकी किताब “प्रेग्रेन्स की वफ़ात”, एल्यूस लम्बरेड्युस, जिसने 310 ई° में अपनी तारीख़ लिखी, शहनशाह बेडीन का वो ख़त जो उसने सिरोयानिस को लिखा था (115 ई° से

138°), दूसरी सदी के नए अफ़लातूनी फ़ल्सफ़े के फ़ैलसूफ़ पारफ़्री ने मसीही मज़हब के खिलाफ़ पंद्रह हिस्सों में लिखी... वग़ैरह। बख़ौफ़ तवालत उन सब का ज़िक्र छोड़ा जाता है।

अब मैं थोड़ा सा ज़िक्र रसूली बुजुर्गों की तस्नीफ़ात का करूंगा, जो पहली सदी मसीही के निस्फ़ (बीच) में मौजूद थे और जिन की तस्नीफ़ात तक़रीबन 50 ई° से लेकर ज़्यादा से ज़्यादा 150 ई° तक के दर्मियानी अर्से में लिखी गईं। यानी रोमी क्लेमन्स का ख़त कुरंथ की कलीसिया को (98 ई° या 99 ई°), अगनातियुस के ख़तूत (107 ई°), पोलोकॉर्प की तस्नीफ़ात (108 ई°), पोलोकॉर्प का शहादत-नामा (155 ई° या 156 ई° के बाद), ही तालीम-उर-रसूल (70 ई° से पहले), बर्नबास का ख़त (70 ई° के आख़िर या 71 ई° के आगाज़ में), शबान बरमिस (92 ई°), व्यागीतस का ख़त (150 ई° से पहले), पापियास की तस्नीफ़ (पहली सदी के निस्फ़ में)। ये सब वो क़दीम मसीही ईमानदार आलिम और बुजुर्ग हैं जिनको रसूली बुजुर्ग के नाम से मौसूम किया जाता है।

यानी वो बुजुर्ग जो रसूलों के हम-अस्र थे, जिन्होंने उनको देखा और उनसे बातें कीं और उनकी बातें सुनीं, या उनके ताबईन, के तब-ए-ताबईन थे। और यह सब के सब 150 ई° से पहले-पहले गुज़र चुके हैं। उन्होंने किताबें लिखीं जो आज हमारे हाथों में हैं और जिन को "रसूली बुजुर्गों की तस्नीफ़ात" कहते हैं।

इन तस्नीफ़ात में नए और पुराने अहदनामों से बहुत से इक्तिबासात और उनकी तरफ़ इशारे, मसीही पूरी-पूरी तालीमात का ज़िक्र और तश्रीह बईना वैसी पाई जाती हैं जैसी मौजूदा अनाजील में हैं। मसीह की उलूहियत, कफ़फ़ारा, मसीह की पैदाइश, मरना, जी उठना, आस्मान पर चढ़ जाना, क्रियामत वग़ैरह-वग़ैरह, क़रीब-क़रीब सारी तालीमात का मुख़्तसर बयान मिलता है। मसलन रोमी क्लिमंस का ख़त कुरिन्थियों के नाम है, कुरिन्थियों का पहला ख़त वाज़ेह और एलानिया तौर पर पौलूस रसूल से मन्सूब हुआ है।

और हमारे ख़ुदावंद के अल्फ़ाज़ जो मत्ती, मर्कुस, लूका की अनाजील में हैं, साफ़ तौर पर इस ख़त में मिलते हैं, मगर इंजील-नवीसों का नाम नहीं दिया गया। यह रसूली बुजुर्गों की आदत है। नीज़ रसूलों के आमाल, रोमियों के ख़त, कुरिन्थियों के हर दो ख़त, ग़लतियों, इफ़िसियों और कुलुस्सियों के ख़त, थिस्सलुनीकियों का पहला ख़त, तीमुथियुस के हर दो ख़त, तितुस के और इब्रानियों के ख़त, याकूब के ख़त और 1, 2 पतरस से कम व बेश इक्तिबास व इशारत पाए जाते हैं।

मगर बिला-मुसन्निफ़ के नाम व इक्तिबासी निशान के, ये शहादत जो नए अहदनामे की किताबों की क़दामत और सेहत और सनद के बारे में इस ख़त के

अंदर दी गई है, वो न सिर्फ़ विलमेन्स की तसव्वुर की जाती है, बल्कि खुद रोमा की कलीसिया की, लिहाज़ा क़तई और क़ाबिल-ए-एतबार है (देखो रसूली बुजुर्ग, सफ़्हा 13)। फिर यह भी साबित है कि वो रोमा की कलीसिया का उस्क़ुफ़ (बिशप) था, और कि उस ने पौलूस और पतरस और ग़ालिबन यूहन्ना और दीगर रसूलों को भी देखा और उनसे गुफ़्तगु की और तालीम पाई (ईज़न, सफ़्हा 8)। इन उमूर के साथ मसीह की विलादत (पैदाइश) और काम और सलीबी मौत और मुर्दों में से ज़िंदा होना वग़ैरह उमूर को "तारीख़ी हैसियत" से बयान किया गया है, ना कि "पुरानी कहानी" के तौर पर, जैसा ख़्वाजा साहब का ज़ोअम (खयाल) है (देखो यनाबीअ-उल-मसीहियत, सफ़्हा 90)।

मगर ख़्वाजा साहब का ऐसा कह देना कोई वक़अत अपने अंदर नहीं रखता। जब इस क़द्र रोमी और यहूदी और मसीही हुक्काम और मोअरिखों और मुखालिफ़ों और मुआविनों की क़दीम-तरीन शहादतें मसीह और उसके कामों और तालीम की बाबत मौजूद हैं, तो किसी का तारीख़ से इन्कार करना ऐसा ही नाक़ाबिल-ए-एतबार और लचर (कमज़ोर) है, जैसा कोई दिन को रात कहे।

याद रहे कि क्रियास बुरहानी यक़ीनियात से मुरक्कब होता है। और यक़ीनियात के उसूल औलियात और मुशाहदात और तजुर्बियात और हदसियात और मुतवातिर और फ़ितरियात हैं। और मुतवातिरात वो वाक़िआत हैं जिनके यक़ीन करने के लिए इतने लोगों की रिवायत दरकार होती है जिनका झूट पर इत्तिफ़ाक़ कर लेना अक्लन मुहाल हो। मगर ये शर्त नहीं कि उनकी तादाद ख़ास हो, बल्कि शर्त ये है कि रावी थोड़े हों या ज़्यादा हों, वो इतने हों कि उनके झूट पर मुत्तफ़िक़ होने को अक्ल मुहाल जाने। यानी उनकी ख़बर से यक़ीन हासिल हो जाए।

यक़ीनियात का ये उसूल तारीख़ को ख़ास है। तारीख़ का यक़ीन मोअरिखों की सदाक़त पर मुन्हसिर है। यानी उनका किसी तारीख़ी अम्र को बयान करने में झूट पर इत्तिफ़ाक़ कर लेना अक्लन मुहाल है। पस इस दलील के मुताबिक़ मज़कूर-बाला, अहक़ाम की जो रोमी थे, दुश्मनों की जो मसीही ना थे, मुआविनों की जो मसीही थे, और तुरा इस पर ये कि वो सब मुतवातिर हैं।

बा'ज़ उन में से खुद चश्मदीद शाहिद हैं, बा'ज़ चश्मदीद शाहिदों (आँखों देखे गवाहों) के नाज़िर और सामे'अ (सुनने वाले) हैं, या उनसे उन्होंने कलाम किया। बा'ज़ों ने मसीहियों की मुक़द्दस किताब इंजील से बराह-ए-रास्त इक्तिबास किया और उन पर मुखालिफ़ाना नज़र डाली, वग़ैरह। इन सब की शहादत (गवाही) मसीह के और उसके मज़हब के तारीख़ी होने पर ऐसी यक़ीनी है कि उनका झूट पर इत्तिफ़ाक़ कर लेना अक्लन मुहाल है। अगर बफ़र्ज़-ए-मुहाल दोस्तों की शहादत पर शक़ किया जाये, तो उनका उस मज़हब के सबब दुख उठाना या मारे जाना, उस में

शक को बिल्कुल रफ़ा कर देता है। (किसी मज़हब का मिन-जानिब-अल्लाह होना या ना होना, या झूटा-सच्चा होना, तारीखी उमूर के यक़ीनात से होने पर कुछ असर नहीं रखता। □□ अम्र □□ □□□ □□□□□□□□□□ □□।)

और जब मुआविनों के तारीखी बयानात की तस्दीक़ उनके मज़हबी मुखालिफ़ों से हो जाती है, तो उनकी शहादत, उनकी शहादत के लिए सोने पर सुहागे का काम कर जाती है। और ख़्वाजा साहब के क़िले के लिए डायना-मइट का काम देती है। एक-एक इंजील की सेहत और मो'तबरी बयान करना हमारे मबहस से बिल्कुल अलग है और ना ही यहां उसकी गुंजाइश है। और उनका वो मक़ूला, यनाबीअ-उल-मसीहियत के सफ़्हा 54 पर, "ईसाई मज़हब को हर-दिल-अज़ीज़ बनाने का ख़याल ग़धे की सिर पर से सींगों का उड़ जाने का मिस्दाक़ हो जाता है।"

फ़िर आपका ये कहना भी तारीखी हैसियत से कैसा ग़लत साबित होता है कि:

"ये सब कुछ, "यानी बाबिल की बा'अल-परस्ती", थिएटर के रंग में होता था। बुख़्तनसर के अय्याम-ए-हुकूमत में भी ये थिएटर हुआ करते थे, जो यहूदियों को क़ैद करके बाबिल में ले गया था, जहां इस्राईली असीर (क़ैदी) कई नस्ल तक गुलामाना हैसियत में रहे, उन थिएटरों को देखते रहे, और वापसी पर इन क्रिस्सों को साथ लाए। इस वाक़िये के अलावा तौरेत और इस्राईली शिआर में जो बीसियों और बातें भी आफ़ताब-परस्ती की शामिल हो गई हैं, मग़ारिबी तहक़ीक़ ने उन सब को इसी वाक़िया, बुख़्तनसर और क़ैद-ए-इस्राईल, की तरफ़ मन्सूब किया है। "किताब पैदाइश के वाक़ि'आत वग़ैरह सब के सब बाबिल से निकल आए।" (ईज़न, सफ़्हा 72)

मुझे ख़्वाजा कमाल-उद्दीन पर इस क़द्र अफ़सू (अफ़सोस) नहीं आता, जिस क़द्र उन यूरोपियन मुहक़िक़ीन पर आता है जिनकी अंधी तक्लीद ख़्वाजा साहब और उनके हमनवा करते हैं। यूरोपियन मुहक़िक़ीन की तहक़ीक़ात का एक उसूल ये है कि जिन दो उमूर में, जिनमें से एक मुक़द्दम और दूसरा मोअख़्खर हो, या दोनों हम-अस्र (एक ही जमाने के) हों, और उनमें बाहमी मुशाबहत और मुवाफ़िक़त ज़्यादा पाई जाये और मुनाफ़क़त कम पाई जाये, तो फ़ौरन नतीजा निकाल लेते हैं कि मोअख़्खर, मुक़द्दम से अख़ज़ हुआ है।

या अगर कोई मसअला जो किसी किताब में है, और वो उनकी अक्ल और तहक़ीक़ात में दुरुस्त ना आए, या उसकी मुखालिफ़त मंज़ूर न हो, तो झट कह देते हैं कि फ़लाँ किताब तारीखी पाया से गिरी हुई है, या ये कि वो मुक़ाम जिसमें वो

मसअला दर्ज है, मुहर्रफ़ है, मगर उसके लिए कोई तारीखी सबूत नहीं मिलता। यही हाल ख्वाजा साहब का भी है।

चुनान्चे आप यनाबीअ-उल-मसीहियत सफ़्हा 94, 95 में मसीह के बा'ज़ अक्वाल को सूरज की कैफ़ियत पर तब्तीक़ देकर यूहन्ना की इंजील के बारे में ये राय क़ायम करते हैं कि:

“खुसूसन इंजील यूहन्ना में, जिसकी तस्नीफ़ के मुताल्लिक़ ये अम्र मुतहक्क़िक्क़ है कि वो मसीह से कई सदियों बाद हुई और सिकंदरिया के मज़हब-ए-फ़ल्सफ़ा के तास्सुरात से ख़ाली नहीं।”

और कि:

“क़दीमी राहिबों ने, जिनमें से एक इंजील-ए-यूहन्ना का मुसन्निफ़ भी था, मसीह को शम्स-परस्तों के सामने क़दीमी सूरज देवताओं का एक मुक़ाम पेश किया।”

इन दोनों में कैसा तज़ाद (टकराव) पाया जाता है! एक में तो यूहन्ना की इंजील का मुसन्निफ़ मसीह से कई सदियों बाद मौजूद बताया जाता है, ख्वाजा साहब के ख़याल के मुताबिक़ “चौथी सदी में, जब मसीहियत और शम्स-परस्ती का तसादुम (आमना-सामना) हुआ।” (सफ़्हा 84)

दूसरे मुक़ाम में इस को “क़दीमी राहिबों” में शुमार किया है। अब भला बताओ, दोनों बातों में से किस बात को सच माना जाए? साफ़ ज़ाहिर है कि जिस ख़याल की बुनियाद ग़लत हो, तो वो ख़याल खुद खलत-मलत होता है। इसी लिए कलाम में तज़ाद पैदा हो जाता है, क्योंकि अपनी राय की तस्दीक़ के लिए, ख़्वाह वो सच्ची हो, ख़्वाह झूटी, हस्बे-मौक़ा व महल बुनियाद बनानी ही पड़ती है, जैसे यहां किया गया है। और यही सूरत उस इस्तिदलाल की भी है जो 72 ई° सफ़्हा पर किया गया है (और जिसका इक्त्तिबास ऊपर किया गया है) कि “बाबिल के यहूदी असीर (क़ैदी) बा'अल-परस्ती के अक़ीदे को और उसके मुताल्लिक़ क़िस्सों को वापसी पर साथ लाए।”

मगर इसका क्या सबूत है कि वो इन क़िस्सों को अपने साथ लाए, और कि उन्होंने इंजीली वाक्लि'आत और तालीमात पर वो बा'अल-परस्ती का रंग चढ़ा दिया? हालाँकि ये अम्र बिल-तहक्कीक़ पाया-सबूत को पहुँच चुका है कि बाबिल की असीरी (गुलामी) से क़ब्ल तो वो बुत-परस्ती या सूरज-परस्ती की तरफ़ अक्सर मर्तबा राग़िब

और मुनहमिक हो जाया करते, और खुदा के अम्बिया बार-बार खुदा की तरफ़ से उनको समझाते और शरीअत के अहकाम याद दिलाते, और कि खुदा को तुम्हारी इस बुत-परस्ती से सख्त नफ़रत और तुम से इसी वजह से सख्त नाराज़गी है। और जब वो उनका कहना ना मानते तो खुदा से सज़ा पाते थे। इसी गुनाह के सबब से खुदा ने उन को आख़िरकार बुख्तनसर के ज़रीये से असीर (क़ैदी) करवाकर बाबिल में भेज दिया था, जहां वो सत्तर बरस तक असीर (क़ैदी) रहे। मगर जब वो पछताए तो खुदा ने उन को वहां से रिहाई दिलाकर फिर यरूशलेम में पहुँचाया, और यरूशलेम और वहां की हैकल बहाल हुई।

और बुत-परस्ती का रंग तो क्या, इसका शाइबा भी उस वक़्त से आज तक उनके तरीक़-ए-इबादत में नहीं पाया जाता। हत्ता कि असीरी (गुलामी) के बाद किसी ज़माने में भी बुत-परस्ती का सुराग़ उनमें नहीं मिलता। बुत-परस्ती उनमें से उस वक़्त से बिल्कुल मादूम (गायब) हो गई, और यह असीरी के बाद के इस्राईलियों के ख़वास में से एक ख़ास्सा है।

जनाब-ए-मन, उन की असीरी (गुलामी) में उनकी खुदा-परस्ती का और बा'अल-परस्ती से नफ़रत का वो आलम था, जो मलाक़ के ज़बूरों में से एक, यानी 137-वीं ज़बूर में मुन्दरज है:

“बाबिल की नहरों पर, वहां हम बैठे और सीहोन को याद करके रोये। हमने अपनी बरबतें बेद के दरख्तों में, जो उसके बीच में थे, टाँग दीं।” क्योंकि वहां उन्होंने, जो हमें असीर (क़ैदी) करके ले गए थे, हमसे दरख्वास्त की कि हम कुछ गाएँ, और वे जो हमारे सताने वाले थे, चाहते थे कि हम खुशी मनाएँ, ये कहकर, “सीहोन के गीतों में से हमारे लिए एक गीत गाओ। हम क्योंकर अजनबी की सर-ज़मीन में खुदावंद के गीत गाएँ? ऐ यरूशलेम, मैं तुझको भूल जाऊँ तो मेरा दहिना हाथ अपना हुनर भूले। अगर मैं तुझको याद न रखूँ और अगर मैं यरूशलेम को अपनी अक्ल खुशी से ज़्यादा तरजीह जानूँ तो मेरी ज़बान तालू से लग जाए।”

बुत-परस्ती के खयालात और क्रिस्सों को अपनी वापसी पर लाना तो दरकिनार रहा, वो तो बुत-परस्त मुल्क को भी ऐसा पलीद और नजिस (नापाक) समझते थे कि उसमें रहकर खुदावंद के गीत गाना भी नामुनासिब और इलाही नाम को बे-इज़्ज़ती करना समझते थे। वो तो “सीहोन को याद करके रोये थे।” उनका नस्ब-उल-ऐन और मुतम्मा-नज़र यरूशलेम और उसकी हैकल और उनका खुदा था। क़दीम दुनिया को और बनी-इस्राईल की तारीख़ के इब्तिदाई मदारिज में उनके मिलानात को मद्-ए-नज़र रखते हुए ये अम्र निहायत ही ज़रूरी मालूम होता है कि वो बिल्कुल अलग-

थलग रहें, ताकि अहद-ए-अतीक़ का मज़हब उन पर देसी अनासिर की आमैज़िश से महफूज़ रहे।

जो उसकी हस्ती के लिए ब-आसानी मोहलिक (नुक़सान देने वाले) साबित होते। और अगर बाबिल में उनकी सत्तर बरस की असीरी (गुलामी) के बाद उस खतरे का मंबा मस्टूद हो गया था, तो इस क्रौम के बड़े हिस्से का उन क्रौमों में, जिनके दस्तुरात और तहज़ीब का असर उन पर बज़रूर पड़ता, मुंतशिर हो जाने के माक़ब्ल की बनिस्बत इस अम्र को बहुत ही लाज़िमी करार दे दिया था। इस ग़र्ज़ के लिए अहादीस भी बड़ी मुफ़ीद और मौजूं साबित हुई हैं, गोया कि वो शरीअत के गर्दोबान हैं, जिससे उसकी ख़िलाफ़वर्ज़ी और तब्दीली नामुम्किन हो गई थी।

The Life and Times of Jesus the Messiah vol. 1 p. 3
जिससे ज़ाहिर होता है कि अगरचे यहूद बाबिल की असीरी में सत्तर बरस तक रहे और हर क्रिस्म के तास्सुरात के अंदर थे, तो भी ऐसे अलग-थलग रहे थे कि मज़हबी नुक्ता-ए-ख़याल किया, तहज़ीब के नुक्ता-ए-ख़याल से भी ख़ालिस और बेलौस रहे थे। साथ ही उनकी शरीअत भी हर क्रिस्म की तब्दीली व तग़ाय्युर से महफूज़ रही।

खुदावंद मसीह ने उन को इसलिए तो कई मर्तबा मलामत की थी कि वो अपनी रिवायतों से खुदा की शरीअत के अहकाम को टाल देते थे, और यह भी कहा कि बेहतर तो था कि उस को भी ना टालते और उस को भी माने। मगर कभी इस बात का इल्ज़ाम उन पर नहीं लगाया कि ग़ैर मज़ाहिब या बाबिली क्रिस्सा-कहानियों का, जिनको तुम अपने साथ लाए हो, तुम पर बड़ा असर है और तुम उनकी तामीर करते हो।

अगर उन पर बाबिली रंगत छाई हुई थी, तो ज़रूर था कि पहले यहूदियत पर होता और फिर ईसाइयत पर। और जब वो खुद कहते हैं कि पेगनइज़्म की रंगत पांचवीं सदी में मसीहियत पर चढ़ी, तो ज़ाहिर है कि पहली, दूसरी, तीसरी सदियों में मसीहियत बिल्कुल ख़ालिस और ग़ैर-मुलव्वस थी। लेकिन जो मसीहियत आज हमारी मुरव्वजा इंजील में पाई जाती है, वही वो है जो इब्तिदाई सदियों में मौजूद थी। पस ख़्वाजा साहब का ये नतीजा निकालना कि इंजील बयान बाबिली दास्तानों से माखूज़ है, बिल्कुल ग़लत है।

नीज़, आँजनाब ने दस-बारह ममालिक के देवताओं का ज़िक्र किया है, जिनके परस्तारों के अक्राइद और वाकि'आत आपस में मिलते-जुलते हैं। मगर ये बिल-तहक़ीक़ व बिला-इम्तियाज़ नहीं बताया कि उन राहिबों ने किस मुल्क के देवता के वाकि'आत और उसके मुताल्लिक़ लोगों के मो'तक्रिदात की तब्दीक़ मसीह और उनके वाकि'आत के साथ की और उसके अक्राइद को अपना अक्राइद-नामा करार दिया।

या सबों के वाकि'आत और अक्काइद का मजमुआ करके मसीहियत पर चस्पाँ कर दिया। आया किसी राहिब ने ये कहा, या बहुतों ने फ़राहम होकर और इत्तिफ़ाक़ करके ये नया मज़हब बना दिया, इन तमाम उमूर का मुफ़स्सिल और तारीख़ी बयान ख़्वाजा कमाल-उद्दीन साहब के ज़िम्मे है। क्रियास बे-असास से काम लेना उलमा का काम नहीं है।

यहूदियों की नफ़रत और अलैहदगी बुत-परस्तों से, जो वो असीरी (गुलामी) के बाद से ख़ुदावंद मसीह के ज़माने तक और माबाअद रखते थे, इस तरह ज़ाहिर है कि यहूदियों की ग़ैर-इल्हामी कुतुब के मुताबिक़ उनका ख़याल ये हो गया था कि बुत-परस्तों का बच्चा भी ऐन अपनी पैदाइश ही के वक़्त से नापाक और पलीद होता है। जो लोग पहाड़ों, पहाड़ियों और झाड़ियों वग़ैरह की परस्तिश करते हैं, अल-मुख्तसर बदतरीन क्रिस्म के बुत-परस्तों को तलवार से क़त्ल कर डालना चाहिए। उस वक़्त के रब्बियों ने बड़ी-बड़ी तदबीरें कर छोड़ी थीं ताकि यहूदी क़ौम फिर बुत-परस्ती में न पड़ जाए।

मसलन, बुत-परस्तों से किसी क्रिस्म की शराकत या रब्त-ज़ब्त न रखना चाहिए, कोई ऐसा काम न किया जाए जिससे बुत-परस्तों को उनकी इबादत में मदद मिल सके, न तो उनको किसी क्रिस्म की राहत या मदद पहुंचाई जाए, हत्ता कि माँओं को उनकी अशद ज़रूरत के वक़्त या अपने शीर-ख़ार (दूध पीते) बच्चों की परवरिश करने में हरगिज़ मदद न देना चाहिए, ताकि बुत-परस्ती के लिए कहीं बच्चा न पैदा होए।

सिर्फ़ इसी पर ही बस नहीं, बल्कि ये कि अगरचे बुत-परस्तों को ख़तरे में ढकेलना अच्छा नहीं, तो भी अगर वो ख़तरे में पड़ जाएँ, तो उनको उस से निकालना भी न चाहिए। रब्बियों का हुक्म था कि "बुत-परस्तों में से बेहतरीन को भी क़त्ल कर दो, और साँपों में जो सबसे अच्छा साँप है उसके सर को कुचल डालो।" अल-ग़र्ज़ जो शख्स ऐसों की इमदाद (मदद) करता या उनसे रब्त-ज़ब्त (मिलना-जुलना) रखता है वो उनमें से एक हो जाने के ख़तरे में है। बुत-परस्तों से यहूदियों की सख़्त नफ़रत और परहेज़ का अंदाज़ा कुछ इस तरह से हो सकता है कि उनको हुक्म था कि अपने मवेशी (पालतू जानवर) भी चरवाहे या परवरिश के लिए उनके सुपुर्द न करो, अपने बच्चों की निगरानी और ख़िदमत भी उन से मत करवाओ। अपनी बीमारी पर भी उनके अतिब्बा (हकीम) को ईलाज मुआलिज़ा (बीमार) के लिए हरगिज़ न बुलाओ। जहां तक मुम्किन हो, हर वक़्त और हर तरह से उनसे किनारा-कशी करो। वो और उनकी चीज़ें नापाक हैं, और उनके घर पलीद, क्योंकि उनमें बुत होते हैं, और वे चीज़ें जो उनके लिए मख़्सूस होती हैं, ईज़न, ईज़न वग़ैरह। और बहुत-सी बातें हैं जिनसे ज़ाहिर होता है कि यहूद में सिर्फ़ बुत-परस्ती ही न थी, बल्कि बुत-परस्ती के ख़यालात भी मादूम (लापता) थे। उनकी (मुशरिकों की) हर

तरफ़ हर एक चीज़ से उनको नफ़रत होती थी, हत्ता कि उनका साया भी उनको पलीद कर देता था। (मर्कुस 7:3, 4)

अब मैं ये बताना चाहता हूँ कि मसीहियत पुराने अहदनामे की पेशीनगोइयों के मुताबिक़ मा'रिज़-ए-ज़हूर में आई, और वो उनका तकमिला है। चुनान्चे सय्यदना मसीह ने खुद फ़रमाया है कि "ज़रूर है कि जितनी बातें मूसा की तौरत और नबियों के सहीफ़ों और ज़बूर में मेरी बाबत लिखी हैं, पूरी हों। फिर उस ने उनका ज़ेहन खोला ताकि किताब-ए-मुक़द्दस को समझें, और उनसे कहा, "यूँ लिखा है कि मसीह दुख उठाएगा और तीसरे दिन मुर्दों में से जी उठेगा।" (लूका 38:44 से 46)

ना कि कोई इत्तिफ़ाक़ी वाक़िया या क़दीमी कुफ़्र व इलहाद का अफ़साना, फ़िल-हक़ीक़त सब कुछ सच-मुच ज़हूर में आया। और जो तालीमात इंजील में पाई जाती हैं, वो किसी की नक़ल नहीं, वो सच-मुच की तल्क़ीन की हुई हैं। चुनान्चे...

1. कि वो कुँवारी से पैदा होगा: "देखो, कुँवारी हामिला होगी और बेटा जनेगी, और उसका नाम इम्मानुएल रखेगी।" (यसायाह 7:14, मुक़ाबला करो मत्ती 1:23)

2. वो शहर बैत-उल-लहम में पैदा होगा: "ऐ बैत-उल-लहम अफ़राताह, हर चंद कि तू यहूदाह के हज़ारों में शामिल होने के लिए छोटा है, तो भी तुझ में से वो शरख़ निकलकर मुझ पास आएगा जो इस्राईल में हाकिम होगा, और उसका निकलना क़दीम अय्याम, अज़ल से है।" (मीकाह 5:2, मत्ती 2:6)

3. मजूसियों का आना: "वो सब जो सुबह के हैं आएंगे, वो सोना और लोबान लाएंगे और खुदावंद की तारीफ़ की बशारतें सुनाएँगे।" (यसायाह 60:6, मत्ती 2:11)

4. मिस्र को भाग जाना: "मैंने अपने बेटे को मिस्र से बुलाया।" (होसेअ 11:1, मत्ती 4:15)

5. मासूमों का क़त्ल-ए-आम: "रामा में एक आवाज़ सुनी गई है, नोहा और ज़ार-ज़ार रोने की। राखिल अपने लड़कों पर रोती है और अपने लड़कों की बाबत तसल्ली नहीं चाहती, क्योंकि वो नहीं हैं।" (यर्मियाह 31:15, मत्ती 2:17, 18)

6. कौमें उस से बरकत पाएँगी: "और दुनिया के सब घराने तुझ से बरकत पाएँगे... और सारी कौमें उसके पास इकट्ठी होंगी।" (पैदाइश 12:6, 49:10, आमाल 3:25, लूका 2:30, 31, 32)

7. गलील में मसीह का काम: “आखिरी ज़माने में ग़ैर-क्रौमों के जलील में, दरिया की सिमत, यरदन के पार बुजुर्गी देगा। उन लोगों ने, जो तारीकी में चलते थे, बड़ी रोशनी देखी, और उन पर जो मौत के साए के मुल्क में रहते थे, नूर चमका।” (यसायाह 9:1, 2, मत्ती 4:16)

8. यहूदियों और ग़ैर-क्रौमों से रद्द किया जाना: “कुव्वतें किस लिए जोश में हैं और लोग बातिल ख़याल करते हैं। ज़मीन के बादशाह सामना करते हैं और सरदार आपस में ख़ुदावंद के और उसके मसीह के मुखालिफ़ मंसूबे बाँधते हैं।” (ज़बूर 2:1, 3, आमाल 4:25, 26, लूका 19:4, नीज़ देखो यसायाह 6:9, 10, 8:14)

9. गिरफ़्तार होना अपने ही रफ़ीक़ के हाथों: “मेरे हम दम ने भी, जिस पर मुझे भरोसा था और जो मेरे साथ रोटी खाता था, मुझ पर लात उठाई।” (ज़बूर 41:9, यूहन्ना 13:18, ज़क्रियाह 13:6)

10. तीस रूपये पर फ़रोख़्त होना: “उन्होंने मेरे मोल की बाबत तीस रूपये तौल के दिये। उन तीस रूपयों को लिया और ख़ुदावंद के घर में कुम्हार के लिए फेंक दिया।” (ज़क्रियाह 11:12, 13, 14; मत्ती 26:15; 27:9, 10)

11. शागिर्दों से तर्क किया जाना: “ऐ तलवार, तू मेरे चरवाहे पर, उस इन्सान पर जो मेरा हमता है, बेदार हो। रब-उल-अफ़वाज फ़रमाता है। उस चरवाहे को मार कि गल्ला परागंदा हो जाए, पर मैं अपना हाथ छोटों पर चलाऊंगा।” (ज़क्रियाह 13:7, मत्ती 26:31, मर्कुस 14:27)

12. झूटे गवाहों की शहादत: “झूटे गवाह उठे हैं, वो मुझ से वो सवालात करते हैं जिन से मैं आगाह नहीं।” (ज़बूर 35:11, 70:12)

13. अज़ीयतों के नीचे ख़ामोशी: “वो तो निहायत सताया गया और ग़म-ज़दा हुआ, तो भी उस ने अपना मुँह न खोला। वो जैसे बर्बा जिसे ज़ब्ह करने के लिए ले जाते हैं और जैसे भेड़ अपने बाल कतरने वालों के आगे बेज़बान है, उसी तरह उस ने अपना मुँह न खोला।” (यसायाह 53:7, 9; मत्ती 26:63, 27:12, 14)

14. मस्तूब होना, और उस वक़्त की हालत: मैं पानी की तरह बहा जाता हूँ और मेरे बंद-बंद अलग हो चले हैं। मेरा दिल मोम की तरह मेरे सीने में पिघल गया... क्योंकि कुत्ते मुझे घेरते हैं, शरीरों की गिरोह मेरा अहाता करती है। वो मेरे हाथ

और मेरे पांव छेदते हैं। मैं अपनी सब हड्डियों को गिन सकता हूँ। वो मुझे ताकते हैं और घूरते हैं। वो मेरे कपड़े आपस में बाँटते हैं और मेरे लिबास पर कुरआ डालते हैं।" (ज़बूर 22:14-18; लूका 23:33, मत्ती 27:35, लूका 23:27, 35, 24)

15. पित्त और सिरके का देना: "उन्होंने मुझे खाने के एवज़ (बदले) पित्त दिया और मेरी प्यास बुझाने को सिरका पिलाया।" (ज़बूर 69:21, यूहन्ना 19:29, मर्कुस 15:23)

16. उसकी कोई हड्डी न तोड़ी जाएगी: "वो उसकी सारी हड्डियों का निगहबान है, उन में से एक भी टूटने नहीं पाती।" (ज़बूर 34:20, यूहन्ना 19:36)

17. उसका छेदा जाना: "वो मुझ पर, जिसे उन्होंने छेदा है, नज़र करेंगे।" (ज़क्रियाह 12:10, यूहन्ना 19:35, 37)

18. ब-रज़ा व रगबत वफ़ात पाना: "ज़बीहा और हदिये को तूने नहीं चाहा, तूने मेरे कान खोले। सोख़्तनी कुर्बानी और खता की कुर्बानी का तू तालिब नहीं। तब मैंने कहा, देख, आता हूँ, किताब के दफ़्तर में मेरे हक़ में लिखा है। ऐ मेरे खुदा, मैं तेरी मर्ज़ी बजा लाने पर खुश हूँ।" (ज़बूर 40:6 से 8, मर्कुस 14:36, यूहन्ना 4:34)

19. हमारे गुनाहों के लिए मुआ: "यक़ीनन उसने हमारी मशक्कतें उठा लीं और हमारे ग़मों का बोझ अपने ऊपर चढ़ाया, पर हम ने उस का यह हाल समझा कि वो खुदावंद का मारा, कूटा और सताया हुआ है। पर वो हमारे गुनाहों के सबब घायल किया गया और हमारी बदकारियों के बाइस कुचला गया। हमारी ही सलामती के लिए उस पर सियासत हुई ताकि उसके मार खाने से हम चंगे हों।" (यसायाह 53:4 से 6)

"उस ने अपनी जान मौत के लिए उंडेल दी और वो गुनहगारों के दर्मियान शुमार किया गया, और उसने बहुतों के गुनाह उठा लिए और गुनहगारों की शफ़ाअत की।" (यसायाह 53:12)

"और बासठ हफ़्तों के बाद मसीह क़त्ल किया जाएगा, पर न अपने लिए।" (दानीयेल 9:26, मत्ती 20:28, यूहन्ना 10:15)

20. वो ज़िंदा हो जाएगा: "इसी सबब से मेरा दिल खुश है और मेरी शौकत शाद, मेरा जिस्म भी उम्मीद में चैन करेगा कि तू मेरी जान को क़ब्र में रहने न देगा और तू अपने कुदूस को सड़ने न देगा।" (ज़बूर 16:9, 10)

"वो दो दिन बाद हमें हयात-ए-ताज़ा बख़्शेगा, तीसरे दिन में वो हम को उठा खड़ा करेगा और हम उसके हुज़ूर में ज़िंदा रहेंगे।" (होसेअ 6:2, मर्कुस 16:9, लूका 24:6, 7, नीज़ देखो ज़बूर 30:3)

21. आस्मान पर सऊद फ़रमाना: "तू ऊँचे चढ़ा, तूने असीर (क़ैदी) किया, तूने लोगों के बल्कि सरकशों के दर्मियान हदिये लिए।" (ज़बूर 68:18)

"ख़ुदावंद ने मेरे ख़ुदावंद को फ़रमाया, तू मेरे दहने हाथ बैठ जब तक कि मैं तेरे दुश्मनों को तेरे पांव तले की चौकी बनाऊँ।" (ज़बूर 110:1, मर्कुस 16:19, लूका 24:51, यूहन्ना 20:17)

22. दुबारा आएगा: "क्योंकि ख़ुदावंद मेरा ख़ुदा आएगा, और सारे कुदूसी तेरे साथ।" (ज़करियाह 14:5)

"एक शख्स आदमज़ाद की मानिंद आस्मान के बादलों के साथ आया और क़दीम-उल-अय्याम तक पहुँचा। वो उसे उसके आगे लाए और तसल्लुत व हश्मत और सल्लनत उसे दी गई कि सब कौमें और उम्मतें और मुख्तलिफ़ ज़बान बोलने वाले उसकी ख़िदमतगुज़ारी करें। उसकी सल्लनत अबदी सल्लनत है जो जाती न रहेगी और उसकी ममलकत ऐसी कि ज़ाइल न होगी।" (दानीएल 7:13, 14, आमाल 1:10, 11)

पुराने अहदनामा में से ये बड़ी-बड़ी बातें जो क़ब्ल-अज़-मसीह पेशीनगोई के तौर पर सैकड़ों बरस पेशतर वार हो चुकी हैं, हदिया नाज़रीन कर दी हैं। मगर अलावा-अज़ी कुर्बानियों, रीत-रसूम, नमूनों और अलामतों से मसीह के और उसके मुताल्लिक़ बहुत से उमूर दर्ज हैं, जिनका यहाँ ज़िक्र करना मुहाल है, और जो मसीह में बईनह पूरी होती हैं, और उन सब का तकमिला मसीह में होता है और सिवाए मसीह के किसी और पर पूरी ही नहीं होतीं।

मसीह के बारे में जो कुछ अहदे-जदीद में मज़कूर है वो पुराने अहदनामे की तस्दीक़ करता है, और पुराने अहदनामे की बातें नए अहदनामे की मुसद्दिक़ हैं। ये जानबीनी तस्दीक़ एक दूसरे को आपस में अलग होने नहीं देती, और साथ ही इस अम्र की माने/अ (रोक) नहीं है कि इंजीली दास्तान के वाक़िआत को बहुत हद

तक बाबिली दास्तान से लिया हुआ है या ज़रूरत-ए-वक्त और ईसाई मज़हब को हर दिल अज़ीज़ बनाने के खयाल ने क़दीमी राहियों को इस बात पर मज़बूर कर दिया कि "ये उनका ही क़दीमी मज़हब है, उनका ही खुदा एक दूसरी शकल में आता है।" इंजील शरीफ़ में कोई ऐसा बयान या इबारत या फ़िक्रह या लफ़ज़ पाया नहीं जाता जिससे इस ख़ाम-खयाली का शाइबा या एहतिमाल पाया जाए।

रही ये बात कि फिर उस मुशाबहत का हल किस तरह हो? वाज़ेह रहे कि इस मुशाबहत से (अगर इस क्रिस्म की मुशाबहत फ़िलवाक़े कहीं पाई जाती हो जिसका ज़िक्र ख़्वाजा साहब ने किया है, क्योंकि वो किताबें हमारे पास नहीं जिन से उन्होंने इस्तिफ़ादा किया है) ये तो नतीजा किसी सूत से मुस्तंबित नहीं हो सकता जो यनाबीअ-उल-मसीहियत में निकाला गया है।

ये तो वही बात होगी कि कोई कहे कि सुल्तान सुबकतगीन का हिरनी और उसके बच्चे वाला क्रिस्सा जो तारीख़ हिंद में दर्ज है, हज़रत मूसा के उस क्रिस्से से लिया हुआ है (जो कि तल्मूद में इस तरह मज़कूर है कि मूसा जब ब्याबान में अपने सुसर के रेवड़ चरा रहा था, तो एक बर्बा रेवड़ छोड़कर चला गया। उस मेहरबान पासबान ने उसका तआकुब किया और सड़क के किनारे एक चश्मे पर पानी पीते उसे पाया। मूसा बोला, बेचारा बर्बा, मैंने न जाना कि तू प्यासा था। और जब बर्बा पानी पी चुका तो उसने उसको बड़ी सहूलियत के साथ अपनी गोद में उठा लिया और रेवड़ के पास ले आया। तब खुदा ने फ़रमाया, मूसा, ऐ रहम-दिल मूसा, अगर तेरी मुहब्बत और ख़बरीगीरी और एक जानवर के लिए ऐसी बड़ी है तू मेरी क़ौम इस्राईल की रहनुमाई करेगा।)

गो इन दोनों बयानात में बहुत-सी बाहमी मुशाबहत है और मौक़ा और महल भी क़रीबन एकसाँ हैं, खुदा का फ़र्मूदा भी एकसाँ है।

और ये भी बदीही (साबित-शुदा) अम्र है कि सुबकतगीन वाला क्रिस्सा मूसा के इस क्रिस्से से बहुत देर बाद का है, ताहम क्या उससे ये इस्तिदलाल करना दुरुस्त है, सिर्फ़ मुशाबहत की बिना पर, कि माबाअद का क्रिस्सा अपने माक़ब्ल क्रिस्से से माखूज़ किया गया है, और मुक़ामी रंग चढ़ा कि ज़रूरत-ए-वक्त और सुबकतगीन को हर दिल अज़ीज़ बनाने की गर्ज़ से मूसा ही की बातें उस पर चस्पॉ कर दी हैं?

क्या ऐसा कहने वाला आज दुनिया के सामने मज़हका-अंगेज़ (मज़ाक़) न बनेगा, या कोई ऐसे इस्तिदलाल की क़द्र करेगा? यही हाल हमारे ख़्वाजा कमाल-उद्दीन साहब के कमाल का है। क्या यह कहना दुरुस्त होगा कि उमर और बक्र आपस में मुशाबेह बसूरत व रंग हैं, हत्ता कि उनका मिज़ाज और तबइयत भी

मिलती-जुलती है, इसलिए साबित होता है कि बक्र उमर का बेटा है या उस से पैदा हुआ है?

हाँ, अलबत्ता जो नतीजा निकलता है और ज़रूर ऐसा ही मुस्तांबित होना चाहिए, तो वो वही है जिसका मैंने "इलाही मज़हब वाहिद, क़दीम और आलमगीर है" के उन्वान के नीचे पहले ही सफ़्हा पर ख़्वाजा साहब के अल्फ़ाज़ में लिख दिया है। वहाँ देख लो, दोहराने की ज़रूरत नहीं। आँजनाब ने कम-अज़-कम दस मुतफ़र्रिक़ ममालिक के देवताओं और उनकी बाबत वहाँ के लोगों के अक्राइद का बयान किया है, जो क़रीब-क़रीब सब यकसाँ हैं, और वो सब मसीहियत के साथ मुशाबहत रखते हैं, और सब के सब मसीहियत से बहुत क़दीम हैं। तो ज़ाहिर है कि मसीहियत ही वो वाहिद मज़हब है जो ख़ुदा की तरफ़ से है, और "हर एक इन्सान के हिस्से में यकसाँ आया है।"

जो निस्बत इस्राईली मज़हब को मसीहियत के साथ है, वही पेगनइज़्म को भी है। और नतीजा सरीह ये सादिर होता है कि मसीही मज़हब ही वो वाहिद मज़हब है जो क़दीम से है और आलमगीर है। मसीही मज़हब ही सारे मज़ाहिब का मरज'अ और मुतम्मा'अ नज़र है। क़ौमों की मरगूब चीज़ यही है जिसका ज़िक़्र हज़्जी नबी की किताब 2:7 में आया है और तरह-तरह से किताब-ए-मुक़द्दस के दीगर मुक़ामात में भी आया है, जैसा कि मैं क़ब्ल-अज़ीं बयान कर चुका हूँ।

इस मज़मून के मुताल्लिक़ जो दूसरी ख़ास और बड़ी बात है, और जिस के और मसीहियत के दर्मियान मुशाबहत बताकर ख़्वाजा कमाल-उद्दीन ने ये साबित करने की कोशिश की है कि मसीहियत क़दीम सूरज-परस्ती ही का मज़हब है, इसको आप़ताब की सालाना कैफ़ियात-ए-मुख्तलिफ़ा पर मुंतबिक़ करके दिखाया है कि शमासी तबइयत मसीहियों ने मसीही रिवायत के ख़िलाफ़, लेकिन शमासी रिवायत के इत्तिबा में यही सब कुछ किया है। इख़्तिसारन इसका भी ख़ाका ज़ेल में दर्ज करके उस पर तब्बिरा किया जाएगा। वहुवा हाज़ा।

"सूरज अपनी सालाना कैफ़ियात-ए-मुख्तलिफ़ा में मुख्तलिफ़ तासीरें ज़मीन पर डालता है। उसकी तमाज़त और उसकी रोशनी ही इन्सान की ज़िंदगी और राहत है। उसका छिप जाना या उसका हमारी आँखों के सामने कमोबेश वक़्त के लिए आना हमारी उम्मीद व बीम का बाइस होता है। मौसम-ए-ख़ज़ाँ, जो ज़मीन पर एक मौत ले आती है, और मौसम-ए-बहार, जिसके आने पर ज़मीन दुबारा ज़िंदा हो जाती है, ये भी दरअस्त आप़ताब की ही मुख्तलिफ़ कैफ़ियात हैं। अब अगर हम उस ज़माने को अपने सामने रखें जब रिवायत और क्रिस्सा-कहानियों में मज़हब की तालीम दी जाती थी, जब हर एक

मज़हर-ए-कुद्रत के साथ एक ना एक देवी-देवता वाबस्ता कर दिया जाता था और उन मज़ाहिर-ए-कुद्रत को इन्सानी खत व खाल से आरास्ता किया जाता था, उनकी पैदाइश और उनकी ज़िंदगी के बाद वाकि'आत के दिन मुकर्रर करके तहवार मनाए जाते थे, ये वाकि'आत और ये पैदाइश और मौत के दिन दरअस्ल इन मज़ाहिर-ए-कुद्रत की कैफ़ियात से ही अखज़ होते थे।”

“हिन्दुस्तान के लोग इन बातों को आसानी से समझ सकते हैं। दीवाली, बैसाखी, बसंत, लोहड़ी वगैरह मुख्तलिफ़ मौसमों की ही कैफ़ियतें हैं। आज तक कुसूफ़ व खसुफ़ के मुताल्लिक़ पुरानी रिवायतें यूँ ही चली आती हैं कि चन्द्रमा और सूरज देवता किसी-किसी देव के क़ब्ज़े में आ गए हैं, उनमें और शैतान में जंग है जिस के पंजे से वो आखिर नजात पाते हैं। इसी तरह सूरज की मुख्तलिफ़ कैफ़ियात भी मुख्तलिफ़ दास्तानों का मूजिब हो गई। वजूह-ए-बाला से ये अम्र मुस्तबइद नज़र नहीं आता कि एक वक़्त दुनिया के बहुत से हिस्से के लोग क्यों सूरज-परस्त न हों। चुनान्चे जनाब मसीह की पैदाइश से पहले और उनकी पैदाइश से तीन-चार सदियाँ तक जिन ममालिक का इस किताब में सूरज-परस्ती के मुताल्लिक़ ज़िक्र आया है, वो सब के सब कुराह-ए-ज़मीन के शुमाली हिस्से में थे। इसलिए जिन आफ़ताबी कैफ़ियात से उन ममालिक में मुख्तलिफ़ मज़हबी रिवायतें पैदा हुईं, वो एक ही नौईय्यत और एक ही वक़्त पर पैदा होती थीं। इन रिवायतों में दो तारीखें मुतमय्यिज़ हैं। एक वो दिन, जिस वक़्त शुमाली कुराह-ए-ज़मीन में सूरज अपनी तमाज़त और रोशनी में बढ़ने लगता या अल्फ़ाज़-ए-दीगर, दिन बड़ा होने लगता है। यह वही 25 दिसंबर का दिन है जिसका आगाज़ 24 दिसंबर के बाद की निस्फ़ रात से शुरू होता है।”

“वही वक़्त मथुरा और दीगर सूरज देवताओं की पैदाइश का दिन है। यही वो वक़्त है जब उफ़ुक़-ए-मशरिक़ पर एक तरफ़ उन सितारों का झुण्ड (खोशा-ए-परदीन) नज़र आता है, जो बुर्ज संबला या बुर्ज कन्या से वाबस्ता हैं। यही वो वक़्त है जब सूरज की पैदाइश का दिन मनाया जाता है, और बा'ज़ शमासी क़ौमों के परस्तार बोल उठते थे कि “कुँवारी ने बच्चा जना।” ये बातें मसीह से पहले दुनिया में मौजूद थीं। मैं ऊपर लिख आया हूँ कि मिस्री नक्शा-बुरूज में संबला या कन्या के खाने में एक कुँवारी बच्चे को गोद में लिए हुए खड़ी दिखाई देती है। बा'ज़ मिस्री नक्शाजात में बाकिरा (कुँवारी)

आईसिस को दिखलाया गया, जो होरस को लिये खड़ी है। मैं ये दिखला चुका हूँ कि मरियम और बच्चे वाला बुत आईसिस और होरस की ही नक़ल है।”

“दूसरी तरफ़ जनाब मसीह की पैदाइश का दिन 25 दिसंबर किसी तरह साबित नहीं होता। अब अगर एक शख्स इस बात के मानने पर मजबूर हो जाये कि विलादत-ए-मसीह के वाकि‘आत कोई तारीखी हैसियत अपने अंदर नहीं रखते, बल्कि वही पुरानी कहानी है, तो क्या करें, खुसूसन जब विलादतगाह-ए-मसीह का तवीला बक्रौल शहीद जस्टिन वही ओजीस का अस्तबल है। इस के मुताल्लिक़ मंजमाना तहक़ीक़ ये है कि शम्स-परस्ती के क़दीमी अय्याम में पैदाइश-ए-सूरज के दिन ऐन ज़मीन के नीचे बुर्ज जौज़ा वाले सितारे नज़र आते थे। बुर्ज जौज़ा का नाम अस्तबल-ए-ओजीस ही था।” (किताब आवर सन गॉड सफ़्हा 148)

“बुर्ज जौज़ा की पेटी के सितारे भी अदद में तीन ही हैं। इन तीन सितारों का नाम पुरानी किताबों में “तीन बादशाह” रखा गया है। (ईज़न सफ़्हा 150) अल-ग़र्ज़ सूरज और मसीह की पैदाइश के वक़्त शम्स-परस्तों के ज़ेहन में कुँवारी का ख़याल तो बुर्ज संबला ने दिया और वलाह-निगाह का ख़याल बुर्ज जौज़ा ने, जिसके हमराह तीन बादशाह 25 दिसंबर की सुबह को नज़र आते हैं। ईसाई अस्थाब जो पसंद फ़रमा दें, तश्रीह कर लें।”

“सूरज की दूसरी कैफ़ियत-ए-तमईज़ा वो है जो मौसम-ए-बहार में पैदा होती है। 25 दिसंबर से चलकर 23 मार्च तक सूरज अपनी ताक़त, यानी रोशनी और हाररत में बढ़ता जाता है। इस बात को कैसे लतीफ़ शाएराना पैराया में सूरज देवता अपालो के मुताल्लिक़ ज़ाहिर किया गया है। अपालो जब 25 दिसंबर को पैदा हुआ तो उसके सर पर एक ही बाल था, यानी एक ही शुआ। 23 मार्च को सूरज अपने बैज़वी दायरे में घूमता हुआ ख़त-ए-इस्तिवा पर आ जाता है, जिस वक़्त दिन-रात बराबर होते हैं। दो दिन तक उसकी यही कैफ़ियत रहती है। इन कैफ़ियात-ए-आफ़ताबी के मुताल्लिक़ जो 25 दिसंबर से 23 मार्च तक पैदा होती हैं, पुरानी शमासी रिवायतें ये थीं कि जुल्मत का देव जो आफ़ताब का दुश्मन है और जिस के पंजे से 25 दिसंबर को सूरज निकला है, उस में और सूरज महाराज में एक मुस्तक़िल जंग शुरू हो जाती है। ये जंग रोज़ाना होती है और हर रोज़ सूरज थोड़ा-थोड़ा देव-ए-जुल्मत पर ग़ालिब ही आता है,

यानी दिन बढ़ता जाता है। 23 मार्च तक तो यही कैफ़ियत रहती है, लेकिन इसके दो दिन तक सूरज कोई तरक्की नहीं करता और एक ही जगह पर खड़ा रहता हुआ नज़र आता है। गोया खुदा-ए-नूर और खुदा-ए-जुल्मत में ये एक आखिरी जंग है जिसमें वो खुदा-ए-नूर, यानी आफ़ताब, जो हर रोज़ थोड़ा-बहुत देव-ए-जुल्मत पर ग़ालिब ही आता था, अब कुछ ऐसा उसके पंजा में आ गया कि उसकी रफ़्तार रुक गई। वो बज़ाहिर मर गया। लेकिन दो दिन के बाद सूरज उसी बढ़ने वाली ताक़त के साथ नमूदार हो गया। इसी तरह देव के चंगुल से ये निकल कर आज़ाद हो गया। ये वो वक़्त है जब सूरज का बैज़वी दायरा ख़त-ए-इस्तिवा पर गुज़र कर सलीबी शक़ल पैदा कर देता है। यही वो वक़्त है जब सूरज बुर्ज हमल में दाख़िल होता है जिसकी शक़ल फ़लकियात में मीग, यानी बछड़े की, दिखलाई गई है। ये वो बछड़ा है जो हर 23 दिसंबर को सलीब मज़कूर-बाला पर चढ़ता है। चूँकि इस बछड़े के मस्लूब होने के दो दिन बाद ही सूरज आब-ओ-ताब से निकलता है, यही वो वक़्त है जब सूरज की ये नई रोज़-अफ़ज़ूँ कैफ़ियत बहार लाकर मुर्दा ज़मीन को अज़सर-ए-नज़िंदा करती है।”

“इसलिए मसीह से पहले ही सलीब और बछड़ा नई ज़िंदगी का निशान समझा गया जो दो दिन के बाद आब-ओ-ताब से निकलता है। अगर कोई इन बातों को एक तकल्लुफ़ाना तश्रीह कहे तो कह भी सकता है, लेकिन इस बात का क्या जवाब है कि मसीह की पैदाइश से बहुत पहले बछड़ा और उसकी कुर्बानी का ताल्लुक़ मथुरा, बेकस और अपालो के साथ मुसल्लम है। सलीब-परस्ती भी क़दीम से है। सलीब क़दीम से ही निशान-ए-ज़िंदगी तो मानी गई है। और यह ज़िंदगी तो मौसम-ए-बहार पर पैदा होती है जिसकी तारीख़ फिर वही आख़िर मार्च है। क़ास-केक और अंडे इस मौक़े पर पहले भी खाए जाते थे।”

“सूरज की तीसरी कैफ़ियत 23, 24 जून को पैदा होती है, जिस दिन सूरज अपने कमाल को पहुँच कर घटना शुरू होता है। बाज़ क़दीमी शमासियों ने उसे सूरज की मौत का दिन भी तसव्वुर किया है। चुनान्चे उसी तारीख़ को सूरज देवता एडोनिस क़त्ल होता है और मौसम-ए-बहार में दुबारा ज़िंदा होता है। ईसाई रिवायत में इस तारीख़ को यूहन्ना इस्तिबागी की तारीख़-ए-विलादत ठहराया गया है। तारीख़न इसका कोई सबूत नहीं, लेकिन इंजील यूहन्ना बाब 3 आयत 3 से इस बात की तश्रीह हो जाती है, जहाँ यूहन्ना मसीह की तरफ़

इशारा करके कहता है कि "वो तो बढ़ेगा और मैं घटूँगा।" अब अगर मसीह की पैदाइश 25 दिसंबर को हो और यूहन्ना की 25 जून को, तो ये अम्र भी साफ़ हो गया, क्योंकि 25 दिसंबर के बाद सूरज बढ़ता है और 24, 25 जून के बाद घटता है।"

"यानी 25 दिसंबर को वो पैदा होता है जिसने बढ़ना है और 25 जून को वो जिसे घटना है। ये कोई तकल्लुफाना तश्रीह नहीं, जबकि इंजील की बहुत-सी आयात सूरज की मुख्तलिफ़ कैफ़ियात की तरफ़ ही इशारा करती हैं। चुनान्चे ज़ेल में मैं चंद आयात देता हूँ। आज ये अम्र मुसल्लम हो गया है कि इंजीलें बहुत बाद में लिखी गईं, जब उस वक़्त के मुअल्लिमान-ए-मसीहियत अपने मज़हब को हर दिल अज़ीज़ बनाने के लिए शमासी रिवायत और पेगनइज़्म की दूसरी रिवायत को लगातर अपने मज़हब में दाख़िल कर रहे थे। इंजीलों के और बहुत से फ़िक़े भी उसी तरफ़ इशारा करते हैं। यूहन्ना बाब 3 आयत 13 में जनाब मसीह फ़रमाते हैं कि "आस्मान पर कोई नहीं चढ़ा सिवाय उसके जो आस्मान से उतरा है, इब्रे-आदम, जो आस्मान में है।" ये फ़िक़ह मसीह के मुँह से नहीं निकल सकता। वो यहूदी थे, और उनसे पहले दो बुजुर्ग जो आस्मान से तो नहीं उतरे थे लेकिन आस्मान पर चढ़ गए थे। एक एलियाह दूसरा इदरीस या हनोक। अलावा अज़ीं उस वक़्त तक मसीह आस्मान पर नहीं चढ़े थे, फिर वो तो ज़मीन पर थे। वो कैसे कह सकते हैं "इब्रे-आदम जो आस्मान में है।" अलबत्ता शमासी रिवायत को सामने रखें तो लफ़ज़-ब-लफ़ज़ इस आयत का हल हो जाता है। सूरज आस्मान से उतरकर 25 दिसंबर को पैदा होता है, वही आस्मान पर चढ़ता है, वही आठवाँ पहर आस्मान पर है।"

"इस के अलावा ज़ेल की आयात भी गौर के क़ाबिल हैं। यूहन्ना बाब 8 आयत 21, "और दुनिया का नूर मैं हूँ, जो मेरी पैरवी करेगा वो अंधेरे में न चलेगा बल्कि ज़िंदगी का नूर पाएगा।" दो हज़ार बरस से तो आज तक मसीही नूर हर जगह नहीं पहुँच सका, लेकिन सूरज पर ये फ़िक़ह लफ़ज़न व म'आनन पूरा होता है। फिर यूहन्ना बाब 9 आयत 4, 5 हस्बे-ज़ैल है, "जिसने मुझे भेजा है, उसका काम मुझे जब तक दिन रहे कर लेना है। रात जब आती है तो कोई काम नहीं कर सकता। जब तक मैं दुनिया में हूँ, दुनिया का नूर हूँ।" यहां भी ये बातें सूरज पर ही मुतहक्किक् होती हैं। मसीह तो दिन-रात अपनी तब्लीग़ में मसरूफ़ थे, अलबत्ता आप़ताब के काम के वक़्त मुईन हैं।"

“इसी क्रिस्म के और भी फ़िक़्रात इंजील में हैं, खुसूसन इंजील यूहन्ना में, जिसकी तस्नीफ़ के मुताल्लिक़ ये अम्र मुतहक्किक्क है कि वो मसीह से कई सदियों बाद हुई। और सिकंदरिया के मज़हब के फ़ल्सफ़े के तास्सुरात से ख़ाली नहीं। लेकिन यहाँ मैं एक ज़ेल का भी हवाला देता हूँ, यानी यूहन्ना 1 बाब 9, 10 “हकीकी नूर जो हर एक आदमी को रोशन करता है, दुनिया में आने को था। वो दुनिया में था, और दुनिया उसके वसीले से पैदा हुई।” खुश-एतिक़ादी को छोड़ कर इन अल्फ़ाज़ पर ग़ौर करो। ये लफ़ज़न व म'आनन सूरज और उसके अमल को ज़ाहिर नहीं करते तो और किस चीज़ को ज़ाहिर करते हैं? सूरज ही आठों पहर दुनिया में है। सूरज से ही ज़मीन निकली, और ज़मीन से इंसान। न सिर्फ़ सूरज आदमी को रोशन करता है, बल्कि इंसान के अंदर जो कुछ भी है, उस का गोश्त-पोस्त, दिल-ओ-दिमाग, सब का सब सूरज ही के वसीले से है। ये एक इल्मी हकीक़त है जिससे किसी को इन्कार नहीं हो सकता। इस हकीक़त की रोशनी में यूहन्ना के इन अल्फ़ाज़ को पढ़ो, तो फिर ये अल्फ़ाज़ सूरज पर ही चस्पाँ होते हैं। हाँ, अगर इस नज़रिये को सामने रखा जाये जिसे इन औराक़ ने मुबर्हन कर दिया है, और वो ये है कि क़दीमी राहिबों ने, जिन में से एक इंजील यूहन्ना का मुसन्निफ़ भी था, मसीह को शम्स-परस्तों के सामने क़दीमी सूरज देवताओं का एक क़ायम-मक़ाम पेश किया, और उसके मुताल्लिक़ वही बातें लिखीं जो शम्स-परस्तों में दायर और सायर थीं।”

“सूरज की चौथी कैफ़ियत 23 सितंबर को वाक़िआ होती है, जिसके बाद सूरज बिल्कुल ही कमज़ोर हो जाता है। दिन घटने लगता है और एक माह बाद, यानी 23 अक्टूबर को सर्मा आ जाती है। हिन्दुस्तान से किसी क़द्र और शुमाल में अगर इन दिनों जाकर देखा जाये तो दिन भी चंदाँ रोशन नज़र नहीं आता। हत्ता कि ईरान के शुमाल में नौ घंटे तक दिन आ जाता है। ये कैफ़ियत उसी वक़्त शुरू होती है जब आप्रताब बुर्ज-ए-अक़ब में आ जाता है। सूरज देवता के दुश्मन की तस्वीर जो सूरज-परस्तों ने खींची है, वो अक़ब की है जिसकी दुम ख़ारदार है। मसीही तहरीरों में शैतान या देव-ए-जुल्मत को बेशक साँप से निस्बत दी गई है, लेकिन जहाँ शैतान को इंसान की शक़ल में दिखलाते हैं, वहाँ उसकी दुम ख़ारदारी दिखलाई जाती है। वो लंबा कोट पहने हुए तो नज़र आता है, लेकिन ख़ारदार दुम को नहीं छिपा सकता। ये माना कि साँप का तसव्वुर तो क्रिस्सा-ए-आदम से ले गया हो, लेकिन दुनिया में वो कौन सा साँप

है जिसकी दुम खारदार हो? अब अगर मसीह आफ़ताब सदाक़त है, तो फिर उस आफ़ताब पर देव-ए-ज़ुल्मत उसी वक़्त ग़ालिब आता है जब वो बुर्ज-ए-अक्रब में जाता है।..... मसीह के बारह हवारी हों या अपालो के या हरकुलेस के बारह कारनामे, ये वही बारह बुर्ज हैं। आख़िर अपालो या हरकुलेस कोई तारीख़ी हस्तियाँ नहीं, वो तो शमासी तख़ैयुलात (खयालात) की एक तस्वीरें हैं। अगर उनके बारह दोस्त मुसल्लम बारह बुर्ज हैं, तो वही तश्रीह हवारियों की तादाद पर क्यों हावी नहीं? फिर यहूदाह इस्करियोती ही नहीं, इससे पहले भी बारह में से एक पहले सूरज-देवताओं को गिरफ़्तार कराता है। वो बुर्ज-ए-अक्रब न सही, बुर्ज-ए-क़ौस सही। बारह में से एक बुर्ज में जाकर सूरज बिल्कुल कमज़ोर हो जाता है, अगरचे मुतक़द्दीमीन (पहले ज़माने के लोगों) ने अक्रब को ही लिया है।” (सफ़हा 88 से 97)

ये तवील इक़्तिबास मैंने इसलिए किया कि सूरज की चारों कैफ़ियात-ए-मुतज़क्किरा क़ारिइन-ए-किराम के ज़हन में पूरी तरह आ जाएँ और उन का जिन बातों के साथ मुक़ाबला किया गया है, वो भी उनके पेश-ए-नज़र रहे। इस सारे इक़्तिबास से ज़ाहिर है कि जनाब कमाल-उद्दीन साहब, जो पंजाब हाईकोर्ट के वकील हैं, हमारे खिलाफ़ अपने मुवक्किल की, ख़्वाह वो कोई हो, ख़ूब जिरह और बहस की है, और पब्लिक की अदालत में अपने इस दावे, कि “ज़रूरत-ए-वक़्त और ईसाई मज़हब को हर दिल अज़ीज़ बनाने के खयाल ने क़दीमी राहियों को इस बात पर मजबूर कर दिया कि वो... लोगों को कह दें कि जनाब मसीह में उनके क़दीमी खुदाओं ने ज़हूर किया... ये उनका ही क़दीमी मज़हब है... उनका ही खुदा एक दूसरी शक़ल में आता है।” (मैंने इख़्तिसार के लिए नुक्ते दे दिए हैं, इबारत पूरी मुतसव्वर रहे।) अपने ज़ोअम (खयाल) में उन्होंने ख़ूब “सबूत” दिया है, और उम्मीद है कि पब्लिक इस बहस को देखकर अश-अश कर उठेगी। मगर ज़रा ठहरें, हमारा भी तारीख़ी डीफ़ेन्स सुन लें और तब फ़ैसला दें।

इस पूरे इक़्तिबास में हमारे वकील साहब ने हस्ब-ज़ैल उमूर ज़ाहिर किए हैं:

(1) 25 दिसंबर को मसीह की पैदाइश के दिन को तारीख़ी तौर पर बिला-सबूत क़रार देकर आफ़ताब की ख़ास कैफ़ियत का दिन मुईन किया है।

(2) 25 दिसंबर से 25 मार्च तक आफ़ताब और जुल्मत के देव के दर्मियान जंग और उस में ख़ुदा-ए-नूर की टूकटू की मग़लूबियत और अज़-सर-नौ ज़िंदा होने को, और उसी वक़्त सूरज के बैज़वी दायरे से ख़त-ए-इस्तिवा पर सलीब की शक़ल का पैदा हो जाने और मीग-बछड़े का 23 दिसंबर को सलीब पर चढ़ने और उसके

मस्लूब होने के दो दिन बाद सूरज के आब-ओ-ताब से निकलने को, मसीह का शैतान के साथ जंग करने और सलीब पर मरने और तीसरे दिन ज़िंदा हो जाने पर मुंतबिक़ करके दिखाया है कि मसीहियत और कुछ नहीं, बल्कि शम्स-परस्ती है।

(3) 23, 24 जून को सूरज का अपने कमाल को पहुँचने के बाद घटना शुरू होने को यूहन्ना के घटने और मसीह के बढ़ने से तश्बीह देकर, यूहन्ना के इस माकूले को आफ़ताब की इस कैफ़ियत पर मुंतबिक़ करके, यूहन्ना की इंजील को ग़लत और शमासी तबीअत के राहिबों में से एक होना साबित किया है, और इसी के ज़िम्न में इंजील की बाज़ आयात की तश्रीह की है।

(4) 23 सितंबर को सूरज की जो हालत होनी शुरू होती है, यानी घटने की, और अक्टूबर को सर्मा (ठण्ड, जाड़ा) का शुरू हो जाना, इसको मसीह और शैतान में जंग और मसीह का मज़्लूब या मस्लूब होकर मर जाना और बारह हवारियों में से एक का मसीह को गिरफ़्तार करवा देना, बारह बुरूज में से एक बुर्ज-ए-अक्रब में सूरज के दाख़िल होने के साथ तश्बीह दिया है।

मगर ज़ाहिर है कि पहली दलील तो बिल्कुल ग़लत है, क्योंकि 25 दिसंबर को मसीह की पैदाइश का दिन मानना इंजील शरीफ़ में कहीं मज़कूर नहीं हुआ, और ना इस दिन को मानने का मसीहियों को इंजील में हुक्म ही है। ना इस दिन के मानने पर इंसान की नजात का इन्हिसार (दारोमदार) है।

चुनान्चे हमारे वकील साहब भी इसी अम्र को तस्लीम करते हैं कि "जनाब मसीह की पैदाइश का दिन 25 दिसंबर किसी तरह साबित नहीं होता।" (सफ़हा 90) पस वो इसकी ख़्वाह कैसी ही तश्रीह क्यों न करें, मसीहियत पर उनकी जिरह और बहस से कुछ भी असर नहीं होता, और आपका दावा बेसबूत रहता है। हाँ, अलबत्ता अगर इससे कुछ साबित होता है तो वो यही है कि:

(अ) मसीह की पैदाइश एक तारीख़ी वाक़िआ है (ख़्वाह वो किसी तारीख़ पर वाक़ेअ हुई हो, वो अम्र दीगर है)।

(ब) मसीह की पैदाइश और इसके मुतअल्लिक़ा उमूर की तस्दीक़ जैसी तारीख़ से होती है (जिसका ज़िक़्र बमए हवालेजात में क़ब्ल-अज़ीं कर आया हूँ), वैसी ही पेगनइज़्म से होती है (इसका भी ज़िक़्र हो चुका है), और वैसी ही सूरज की महुव्वला बिला-कैफ़ियत से भी होती है। पस मसीह की पैदाइश एक हक़ीक़त है, ना कि अफ़साना।

(ज) मसीहियत पर तारीख, पेगनइज़्म (मज़ाहिब-ए-कुफ़्र व इल्हाद) और इल्म-ए-नुजूम तीन गवाह हैं।

दूसरे अम्र की बाबत भी हमारे वकील साहब ने कोई तारीखी सबूत इसका नहीं दिया कि मसीह का मस्लूब होना, और तीसरे दिन ज़िंदा होना, और बड़े आब-ओ-ताब से ज़ाहिर होना कोई हक़ीक़ी वाक़िआ नहीं, बल्कि महज़ सूरज की कैफ़ियत को शमासी तबीअत-ए-क़दीम राहिबों ने मसीह पर और उसके सलीबी वाक़िआत पर चस्पाँ कर दिया है। हाँ, अलबत्ता इससे अगर कुछ साबित होता है तो वो यही है कि:

(1) मसीह का मस्लूब होना, तीसरे दिन ज़िंदा होना, और बड़ी आब-ओ-ताब से अपने शागिर्दों पर ज़ाहिर करना, ये सब एक मुसल्लिमा तारीखी उमूर हैं।

(ब) सय्यदना मसीह के मस्लूब होने और ज़िंदा होने के वाक़िआ और मुतअल्लिक्का उमूर की तस्दीक़ न सिर्फ़ तारीख ही से होती है (जैसा कि गुज़रा), बल्कि पेगनइज़्म से भी होती है (ये भी पहले मज़कूर हो चुका)। और इस पर तीसरा गवाह इल्म-ए-नुजूम का बयान है।

(च) मसीह से पहले ही सलीब और बछड़ा नई ज़िंदगी का निशान समझा गया है। "सलीब-परस्ती भी क़दीम से है।" गो हम लकड़ी या किसी और चीज़ की सलीब बनाकर उसकी परस्तिश नहीं करते, मगर ये ज़रूर मानते हैं कि ज़िंदगी मसीह की सलीब पर ईमान लाने से ही मिलती है, और ये क़दीम है। यही वो "इस्लाम" या "मज़हब-ए-हक़" है जो नूह से लेकर सय्यदना मसीह तक हर क़ौम व मिल्लत को एकसाँ दिया गया है। ये मसीहियत की क़दामत और उसके आलमगीर होने का और इस उसूल की क़दामत का भी बयान है कि "बग़ैर खून बहाए गुनाहों की माफ़ी नहीं।" शुरू से इंसानों को इस अम्र की ज़रूरत महसूस हुई, और इसी के वो आरज़ूमंद थे। और क़ौमों की आरजू मसीह-ए-मस्लूब में पूरी होती है।

तीसरे अम्र के बारे में ये अर्ज़ है कि हमारे मुखालिफ़ वकील साहब का ये कहना हक़ीक़त के पाया से गिरा हुआ है कि "इंजील की बहुत-सी आयात सूरज की मुख्तलिफ़ कैफ़ियात की तरफ़ ही इशारा करती हैं।" क्योंकि तारीखन इसका कोई सबूत नहीं। ये कह तो दिया है कि इंजील यूहन्ना का मुसन्निफ़ भी "क़दीमी राहिबों" ही में से था, मगर सबूत नदारद। महज़ किसी बात का कह देना कोई दलील नहीं होता।

मैं ख़्वाजा साहब से ये भी दरियाफ़्त करूंगा कि राहिब की अज़-रू-ए-मसीहियत क्या तआरिफ़ है? क्या मसीह के हवारी राहिब थे? ख़ैर, उसको भी जाने

दो। आप इतना तो मानते हैं कि यूहन्ना मसीह की तरफ़ इशारा करके कहता है कि "वो तो बढ़ेगा और मैं घटूँगा।" कम-अज़-कम ये तो तारीख़ी अम्र है कि यूहन्ना इस्तिबागी ने मसीह के हक़ में कहा। और इस बात पर पूरा सुकूत करते हैं कि यूहन्ना की ये बात पूरी हुई या नहीं। मगर मैं जनाब को बताए देता हूँ कि ये यूहन्ना ने पेशीनगोई के तौर पर फ़रमाया था और वो ब-ज़िन्सा पूरी भी हो गई। यूहन्ना का घटना ज़रूरी था ताकि मसीह बढ़े। चुनाच्चे मसीह और उसके शागिर्द बपतिस्मा देते थे और यूहन्ना भी बपतिस्मा देता था, मगर अलग-अलग। इस सबब से यूहन्ना के शागिर्दों ने आकर उससे शिकायत की, मगर यूहन्ना ने जवाब दिया कि "इंसान कुछ नहीं पा सकता जब तक कि उसको आसमान से न दिया जाए। ज़रूर है कि वो बढ़े और मैं घटूँ।" और यह पेशीनगोई पूरी हो गई, जबकि यूहन्ना कैद में डाला गया। उसका काम ख़त्म हुआ और मसीह ने काम शुरू कर दिया। और उसका काम बढ़ता गया और उसकी शौहरत तमाम सूर, और गलील, और दक्रपलस, और यरूशलेम, और यहूदिया, और यरदन के पार से बढ़ी भीड़ उसके पीछे हुई। (मत्ती 4:24, 25)

सलीब तक बराबर उसका काम और शौहरत बढ़ती रही। उसके काम का एक पहलू सलीब पर ख़त्म हुआ और दूसरा उसके ज़िंदा होने और आसमान पर जाने के बाद शुरू हुआ। और पीन्तीकोस्त से लेकर आज तक बढ़ रहा है। और आसमान में उसकी शफ़ाअत का काम भी बढ़ रहा है। ये दोनों काम क्रियामत तक बढ़ते रहेंगे। मगर जो शरह ख़्वाजा साहब ने की है, वो उनकी कोई तकल्लुफाना तश्रीह नहीं है, क्योंकि इंजील के बयान में दो अश्खास का ज़िक्र है जिनमें से एक घटता और दूसरा बढ़ता है। और घटने-बढ़ने का हर दो जानिब का अमल बराबर आज तक जारी है। मगर आपकी आपत्ताब-परस्ती में सिर्फ़ सूरज ही है और वही घटता और बढ़ता रहता है।

वो घटने और बढ़ने के मुदामी आवागमन के चक्कर में फिर रहा है, जिससे उसको कभी रिहाई नहीं। हमारे वकील साहब का कहना शायद उस वक़्त कुछ वक़अत रख सकता था, अगर वो सय्यदना मसीह की विलादत को 25 दिसंबर और यूहन्ना इस्तिबागी की पैदाइश को 25 जून करार दे देते और तारीख़न साबित और तस्लीम कर लेते, क्योंकि ये उनके क़ौल के लिए एक बुनियाद हो जाती। लेकिन जब वो इन तारीख़ों पर इन बुजुर्गान की पैदाइश ही नहीं मानते, तो फिर ये मुशाबहत पैदा करना, अगर उनके तअस्सुब पर महमूल न किया जाए, तो और क्या कहा जाए?

फिर अगर अपने मुखालिफ़ के वकील की तरफ़ इस बात को रखें कि "इस बात का क्या सबूत है कि वो 25 दिसंबर को पैदा हुआ" (सफ़हा 85) और "जनाब मसीह की पैदाइश का दिन 25 दिसंबर किसी तरह साबित नहीं होता" (सफ़हा 90) और कि "ईसाई रिवायत में इस तारीख़ को (यानी 25 जून) यूहन्ना इस्तिबागी की

तारीखे विलादत ठहराया गया है, तारीखन इसका कोई सबूत नहीं”, और इसके मुक़ाबिल में इस बयान या दावे को रखा जाए कि “अब अगर मसीह की पैदाइश 25 दिसंबर को है और यूहन्ना की 25 जून को”, तो ज़ाहिर है कि वकील साहब के बयान में तज़ाद (टकराव) पाया गया। जिस बात की आप पहले तर्दीद करते हैं, उसी की फिर तर्दीद करते हैं। और तुरा इस पर यह कि इस ग़लत-बयानी की बिना पर आप अपने इस दावे को मुब्तनी करते हैं कि “ये अम्र भी साफ़ हो गया, क्योंकि 25 दिसंबर के बाद सूरज बढ़ता है और 24, 25 जून के बाद घटता है, यानी 25 दिसंबर को वो पैदा होता है जिसने बढ़ना है और 25 जून को वो जिसने घटना है।”

पस जिस अम्र की बिना (बुनियाद) ग़लत है, तो खुद वो अम्र भी ग़लत है, या दूसरे लफ़्ज़ों में अगर बिना (बुनियाद) ग़लत है, तो उसी का मुब्तनी भी ग़लत है। और हमारे मुहतरम वकील साहब के इस शेअर की लफ़ज़न व म'आनन तस्दीक़ हो जाती है कि:

ख़िश्त-ए-अव्वल चुँ नहद मुअम्मर कज

ता सौद (या) मीरौ दीवार कज¹

लिहाज़ा वकील साहब का ये दावा बिला-दलील (बगैर दलील) है और फ़ैसला पब्लिक से मतलूब है। अब मैं थोड़ी देर के लिए इंजील जलील व कलाम नबील के उन चंद मुक़ामात पर मुख़्तसर तौर पर तब्सिरा करूंगा, जिनकी बाबत वकील साहब लिखते हैं कि वो आयात सूरज की कैफ़ियात की तरफ़ ही इशारा करती हैं, चुनान्चे...

यूहन्ना बाब 3 आयत 13, ये आयत किसी तरह भी सूरज की किसी कैफ़ियात की तरफ़ इशारा नहीं करती। इस आयत के सियाक़ व सबाक़ से इस महुव्वा मफ़हूम को कुछ ताल्लुक़ नहीं है। ये तो पाँचवीं जमाअत के लड़के भी जानते हैं कि सूरज एक ही जगह क़ायम है और ज़मीन उसके गिर्द हरकत करती है। सूरज न तो आसमान पर कभी चढ़ा है, न आसमान से कभी उतरा है। बल्कि आठों पहर आसमान में रहता है। वो माद्दी शै हो कर क़ायम-बिल-मकान है। आन-ए-वाहिद में उसका आसमान से उतरना और आठों पहर वहाँ रहना नामुम्किन है।

25 दिसंबर को उसका पैदा होना, आसमान से उतरना, आठों पहर आसमान पर रहना, एक दूसरे के मुतज़ाद उमूर हैं। मसीह से पहले, बावजूद हनोक और एलियाह के आसमान पर चढ़ जाने के, बल्कि हज़रत सुलेमान से पहले हनोक

¹ तर्जुमा : अगर इमारत बनाने वाला पहली ईंट ही टेढ़ी रख दे, तो फिर दीवारें भी आख़िर तक टेढ़ी ही उठेंगी।

आसमान पर चढ़ गए थे। जिस तरह याकूब का बेटा आजूर, जो यहूदी था, ये कह सका कि "कौन आसमान पर चढ़ता और उस पर से उतरता?" (अम्साल 30:4) उसी तरह सय्यदना मसीह के मुँह से ये कलिमा निकला। उस ने तो, बावजूद हनोक के पहले ही आसमान पर होने के, ये कलिमा इस्तिफ़हाम-ए-इंकारी की सूत्र में कहा। मगर सय्यदना मसीह ने बताया कि "सिवा उसके जो आसमान से उतरा, यानी इब्रे-आदम जो आसमान में है", कोई आसमान पर अपनी मर्ज़ी और ताक़त से नहीं चढ़ा। हनोक की बाबत लिखा है कि "खुदा ने उसे ले लिया।" (पैदाइश 5:24) और एलियाह के बारे में किताब-ए-मुक़द्दस में मज़कूर है कि "खुदावंद ने चाहा कि एलियाह को एक बगोले में उड़ाकर आसमान पर ले जाए।" (2 सलातीन 2:1, 11)

लेकिन खुदावंद का आस्मान पर से आना और वापस जाना अपनी मर्ज़ी और कुद़्रत व इख़्तियार से था, जो बाप से उसको मिला था। (यूहन्ना 10:18) पस ऐसे कलमात सिवा मसीह के किसी यहूदी के मुँह से निकल नहीं सकते थे। फिर अगर ऊपर की एक दो आयात पर ग़ौर किया जाये तो ज़ाहिर होता है कि मसीह ने नीकूदीमस को सर-ए-नौ पैदा होने की तालीम दी थी। मगर वो उसको समझ न सका। इस पर मसीह ने उससे फ़रमाया कि "जो हम जानते हैं, वो कहते हैं, और जिसे हमने देखा है, उसकी गवाही देते हैं, और तुम हमारी गवाही कुबूल नहीं करते। मैंने तुमसे ज़मीन की बातें कहीं और तुमने यक़ीन नहीं किया, तो अगर मैं तुमसे आस्मान की बातें कहूँ तो क्योंकर यक़ीन करोगे।" "और आस्मान पर कोई नहीं चढ़ा, सिवाए उसके कि जो आस्मान से उतरा", "जो आस्मान की बातें कहे" या जो आस्मान की बातें जानता और आस्मान और ज़मीन दोनों से रब्त रखता है। या दूसरे अल्फ़ाज़ में, "आस्मान से उतरा और आस्मान में है, यानी इब्रे-आदम", जिसके सामने माज़ी और हाल यक़साँ हैं। मकानी मुसाफ़त या फ़ासले जिसके लिए कुछ चीज़ नहीं, ज़मान और मकान जिसको घेरते नहीं, चढ़ना और उतरना और आस्मान पर होना उसके लिए यक़साँ है। आस्मानी बातों के बारे में उसका इल्म-ए-लुदनी (यानी वो इल्म जो बग़ैर दुनियावी उस्ताद के खुदा के फैज़ से हासिल हुआ हो) है। इस म'अनी में "आस्मान पर कोई नहीं चढ़ा सिवाए उसके कि जो आस्मान से उतरा", फ़िक़्रह "आस्मान पर चढ़ा" के म'अनी, वो जो आस्मानी बातों से, या उन बातों से जो सिर्फ़ आस्मान ही में जानी जाती हैं। (यूहन्ना 3:13, रोमियों 10:6, मुक़ाबला करवाओ इस्तिसना 30:12, अम्साल 30:4, देखो एडवर्ड रॉबिनसन साहब डी° डी° ई° एल° एल° डी° के नए अहदनामे की यूनानी और अंग्रेज़ी डिक्शनरी, लफ़ज़ Ava Barwv, नम्बर 2) फ़िक़्रह "जो आस्मान में है", "है" फ़े'अल के लिए यूनानी में शुब्हा फ़े'अल है जिसमें फ़ा'इली तसव्वुर को बशक्ल-ए-सिफ़त बयान किया जाता है और न उसमें मुसद्दिर का और न फ़े'अल के हर किसी ज़माने का शाइबा पाया जाता है।

ये फ़िक़्रात कह कर सय्यदना मसीह नीकूदीमस के इस यक़ीन और ईमान की तर्मीम व तस्बीह फ़रमाते हैं, जो वो मसीह की बाबत रखता था कि वो "उस्ताद" है या एक "रब्बी" है, और उसे बताते हैं कि मैं तेरे ज़ो'अम (खयाल) के मुताबिक़ रब्बी या मामूली उस्ताद नहीं हूँ। मेरा इल्म-ए-लुदुनी (यानी वो इल्म जो बग़ैर दुनियावी उस्ताद के खुदा के फ़ैज़ से हासिल हुआ हो) है। मेरे सामने माज़ी और हाल बराबर हैं। ज़मान और मकान में मैं महदूद नहीं।

यूहन्ना बाब 8 आयत 12 "और दुनिया का नूर मैं हूँ, जो मेरी पैरवी करेगा वो अंधेरे में न चलेगा, बल्कि ज़िंदगी का नूर पाएगा।" मसीह हक़ीक़त में वो माद्दी सूरज नहीं, जो हमें नज़र आता है, और न उसमें से वो रोशनी निकलती है जो माद्दी हो और माद्दी तारीकी को दूर करे, जैसे कि ये हमारा सूरज करता है। बल्कि यहाँ मसीह ने बतौर इस्तिआरा अख़्लाक़ी और रूहानी नूर अपने आपको क़रार दिया है, और तारीकी या अंधेरे को भी अख़्लाक़ी और रूहानी तारीकी ही से इस्तिआरतन कहा है। और फ़रीसियों ने ऐसा ही समझा। सय्यदना मसीह का मंशा इल्म-ए-अस्ट्रॉनॉमी की तालीम देना न थी। जनाब के ज़ेहन में तो "शमासियों" और "सूरज-परस्तों" का खयाल भरा पड़ा है। भला मसीह की आला और अफ़र्ा रूहानी तालीम की वहाँ क्या गुंजाइश हो सकती है।

ये तो तारीख़ी हक़ीक़त है कि यूरोप और अमरीका और अफ़्रीका के बाशिंदे, मसीहियत के वहाँ पहुँचने से पेशतर, वहशी और बुत-परस्त थे। वसावस और वहमियात का शिकार बने हुए थे, क़ज़ाती (लूटना) और जुल्म उनका पेशा था। मगर आज हमारे नजात-दहिंदा की बरकत और इंजील के तुफ़ैल, वही ममालिक आला दर्जे के आलिम व फ़ाज़िल, दाना और ज़ीरक, मुहज़ज़ब और मुनव्वर बने हुए हैं।

दूर क्यों जाओ, अपने हिन्दुस्तान ही को देख लो। हिंदू राजाओं और मुसलमान बादशाहों की सल्तनत का मुकाबला आज मसीही सल्तनत से कर लो। बुत-परस्ती, मज़ालिम, जहालत, अस्फल को जा रहे हैं। खुदा-परस्ती, बाहमी हमदर्दी, इल्म व फ़ज़ल और अख़्लाक़ की रोज़-अफ़ज़ूँ तरक्की है। गो रुहानियत की अभी बड़ी कसर है, जिसकी वजह ये है कि हिन्दुस्तान अभी मसीह के क़दमों पर नहीं पड़ा। मगर फिर भी मसीहियत ने हर मज़हब और फ़िर्के में खमीर का सा अंदर ही अंदर ख़ूब असर किया हुआ है और बराबर असर करता जा रहा है। आज़ादी की सड़क पर हिन्दुस्तान ज़ोर से चल रहा है, क्योंकि हिन्दुस्तान में "खुदावंद का रूह है, वहाँ आज़ादी है।" बेशक रुहानियत की अभी बहुत कसर है, और वजह वही जो ऊपर मज़कूर हुई। मुफ़स्सिल ज़िक़्र तवील है।

"जहान का नूर" मसीह है, जो उसकी पैरवी करेगा वो अंधेरे में न चलेगा, बल्कि ज़िंदगी का नूर पाएगा।" चीन या जापान की रू भी इसी तरफ़ है। बरअक्स

इसके उन ममालिक को देखो, जहाँ इंजील नहीं पहुँची और जहाँ के बाशिंदों ने अभी तक मसीह की पैरवी नहीं की। मसलन अफ़ग़ानिस्तान, बलोचिस्तान, तिब्बत वगैरह।

यूहन्ना बाब 9 की आयत 4, 5 वगैरह, "जिसने मुझे भेजा है, हमें उसके काम दिन ही दिन में करने ज़रूर हैं। वो रात आने वाली है जिसमें कोई शख्स काम नहीं कर सकता। जब तक मैं दुनिया में हूँ, दुनिया का नूर हूँ।" यहाँ भी ये बातें सूरज पर मुतहक्किक नहीं होतीं। अल्फ़ाज़ "हमें उसके काम करने ज़रूर हैं" और "रात-दिन" के ये म'अनी हैं कि एक वक़्त आ रहा है, यानी मसीह की वफ़ात के बाद, जबकि ऐसा मालूम होगा कि गोया शरारत की ताक़त का ग़लबा है। और यह वही "रात" होगी, जब मसीह का वो काम, जो वो बनी-नूअ-इन्सान की नजात के लिए करने को था, फिर नहीं हो सकेगा। इसी लिए उन्होंने फ़रमाया कि "हमें उसके काम दिन ही दिन में करने ज़रूरी हैं।" चुनाँचे उन्होंने अपने सारे काम पूरे किए, और जान देने से पहले फ़रमाया, "पूरा हुआ।"

मसीह उस वक़्त मु'अय्यन हैं, जिसको यहाँ "दिन" से ताबीर किया है। अगर वो काम न करते, तो उसी के लिए "वो रात" आ जाती जिसमें कोई शख्स काम नहीं कर सकता।" जैसा कि लाज़र को मुर्दों में से जिलाने से पहले मसीह ने बताया था कि "क्रियामत और ज़िंदगी मैं हूँ", वैसा ही वो इस वक़्त फ़रमाते हैं कि "रूहानी नूर का मसज़ा और मंबा सरचश्मा मैं हूँ", जिसका मख़ूज़ और माद्दी अलामत यह सूरज है। क्योंकि रूहानियत को माद्दियत पर तक्रद्दुम बिल-ज़ात, तक्रद्दुम बिल-ज़मान और तक्रद्दुम बिल-असर सभी तरह से हासिल है, न कि बिलअक्स (इसका उलट)।

जिस तरह माद्दी आलम में "आफ़ताब" दुनिया का नूर है, और इंसान को चाहिए कि दिन ही को अपने काम कर ले, और ऐसा ही होता है, क्योंकि रात के वक़्त कोई काम नहीं कर सकता, क्योंकि जब तक वो दुनिया में है, वो दुनिया का नूर है। उसी तरह जिसने हमें इस दुनिया में भेजा है, "हमें उसके काम इसी ज़िंदगी में, जो "दिन" है, करने ज़रूर हैं। हाँ, वो "रात" आने वाली है", यानी "मौत आने वाली है", जिसमें कोई शख्स काम नहीं कर सकता। जब तक वो इस ज़िंदगी में हमारे साथ है, वो हमारी ज़िंदगी की दुनिया का नूर है।

मेरे मुअज़्ज़िज़ और मुहतरम दोस्त ख़्वाजा कमाल-उद-दीन साहब! मैं आपसे बिल-ख़ुलूस-ए-क़ल्ब और नेक नीयती से अर्ज़ करता हूँ कि जिसने आपको भेजा है, आपको उसके काम दिन ही दिन में करना ज़रूरी है। वो "रात" यानी "ज़िंदगी का खातिमा, या मौत", आने वाली है जिसमें कोई काम नहीं कर सकता।" जब तक आप ज़िंदा हैं, आप दुनिया में हैं, और ख़ुदावंद मसीह "दुनिया का नूर" है। आइए, देर न कीजिए। उस नूर से मुनव्वर हो जाइए। आफ़ताब-ए-सदाक़त के पास तशरीफ़

लाइए। उस सूरज की परस्तिश से, जिसके पीछे आप पड़े हुए हैं और जिसकी वकालत कर रहे हैं, आपको क्या फ़ायदा?

यूहन्ना 1 बाब आयात 9, 10, "हक्कीक्री नूर जो हर एक आदमी को रोशन करता है, दुनिया में आने को था। वो दुनिया में था, और दुनिया उसके वसीले से पैदा हुई, और दुनिया ने उसको न पहचाना।" आखिरी फ़िक़रा जो तहत-उल-ख़त है, उसको ख़्वाजा साहब ने छोड़ दिया है, शायद इसलिए कि इस फ़िक़रे से आपका मतलब पूरा न होता था। क्योंकि "वो हक्कीक्री नूर नहीं है, और न ही उसकी बाबत ये कहा जा सकता है कि वो "दुनिया में आने को था", क्योंकि जैसा आप खुद फ़रमाते हैं और है भी दुरुस्त, सूरज ही आठों पहर दुनिया में है।" और आखिरी ज़र्ब आप के सूरज पर ये फ़िक़रा है जो आप छोड़ गए कि "और दुनिया ने उसे न पहचाना।" इस माद्दी दुनियावी सूरज को तो दुनिया ने ख़ूब पहचाना। हत्ता कि उसका हुजुम, उसके अज़्ज़ा-ए-तर्कीबी, उसकी आतिश के शोलों की बुलंदी, ज़मीन और दीगर सय्यारों से उसकी दूरी और उन पर तासीरात, उसकी रफ़्तार वग़ैरह-वग़ैरह को ख़ूब जाना है। और उसकी बाबत रोज़-रोज़ तहक्कीकात हो रही हैं। आज इल्मी दुनिया में कोई नहीं कह सकता कि "दुनिया ने उसे न पहचाना।"

मुक़ाम महव्वला बाला का फ़िक़रा फ़िक़रा सय्यदना मसीह पर सादिक़ आता है, न कि आपके सूरज देवता पर जिसकी आप वकालत कर रहे हैं। मसीह "हक्कीक्री नूर" है। हर क़िस्म का नूर जो इस माद्दी दुनिया में है, ख़्वाह वो नूर-ए-अक्ल और नूर-ए-अख़्लाक़ हो, ख़्वाह रुहानी नूर या नूर-ए-मज़हब हो। ये सब नूर या रौशनी जो दुनिया की ज़ी-अक्ल और ज़ी-रूह मख़्लूक़ यानी इन्सान को हासिल हैं, ख़्वाह वो नूर हो जो हमारे सूरज में मौजूद है, क्योंकि वो भी "दुनिया" ही में शामिल है। सब के सब नूर उसी "हक्कीक्री नूर" से अपना नूर हासिल करते हैं, क्योंकि "दुनिया उसके वसीले से पैदा हुई है।" वो नूर दुनिया में था। यानी कोई ऐसा ज़माना नहीं कि ये कहा जा सके कि वो दुनिया में नहीं है। "वो दुनिया में था।" यानी दुनिया के हर मज़हब में था, कोई मज़हब उस नूर के नूर से ख़ाली नहीं। मगर "दुनिया ने उसे न पहचाना।" ये दुनिया का क़सूर है, न कि नूर का। मसीहियत क़दीम से आलमगीर है, अगरचे दुनिया ने मसीहियत को जो उसमें थी न पहचाना, जैसे नैनवा, मिस्र, यूनान, हिन्दुस्तान वग़ैरह के मज़ाहिब में है।

चूँनाँचे ख़्वाजा कमालुद्दीन साहब ने "यनाबिअ-उल-मसीहियत" में मुफ़स्सिल बयान कर दिया है। खुदा उनका भला करे कि ऐसा ख़ज़ाना हमारे हाथों में दे दिया। "वही दुनिया में आने को था।" यानी मुजस्सम होने को था। "वो अपने घर आया और उसके अपनों ने उसे कुबूल न किया।" यानी वो दुनिया में आया जो उसका घर है, मगर अफ़सोस कि "उसके अपनों ने उसे कुबूल न किया।" मगर ये सब पर सादिक़ नहीं आता, क्योंकि बहुतों ने उसे कुबूल कर लिया। इसी लिए आगे लिखा है कि

“लेकिन जितनों ने उसे कुबूल किया, उसने उन्हें खुदा के फ़र्ज़न्द बनने का हक़ बख़्शा।” इन्सान मसीह ही को कुबूल करके, यानी उस पर दिल से ईमान लाकर, खुदा के फ़र्ज़न्द बनने का हक़ हासिल करता है। यही “सर-ए-नौ” या “ऊपर से पैदा होना” है, जिसके बग़ैर इन्सान “खुदा की “बादशाहत को देख नहीं सकता”, खुदा की बादशाहत में दाख़िल नहीं हो सकता।”

प्यारे भाई! आइए, तशरीफ़ लाइए। उस हक़ीक़ी नूर को पहचानिए, “जो हर एक आदमी को रोशन करता है”, वो दुनिया में आने को था, और दुनिया उसके वसीले से पैदा हुई, और दुनिया ने उसे नहीं पहचाना।” आज करीब दो हज़ार बरस हुए कि वो “मुजस्सम हुआ” और अपनों के पास आया। जो उस पर ईमान लाता है, उसे खुदा के फ़र्ज़न्द होने का हक़ बख़्शा जाता है।

अब रही चौथी बात, यानी “सूरज की चौथी कैफ़ियत” सो इस की बाबत, इतना कहना काफ़ी होगा कि ये भी सय्यदना मसीह के सलीबी वाक़िआत पर निज़ाम-ए-शम्सी की शहादत और तस्दीक़ है:

“आस्मान खुदा का जलाल बयान करते हैं और फ़िज़ा उसकी दस्तकारी दिखाती है। एक दिन दूसरे दिन से बातें करता है, और एक रात दूसरी रात को मारफ़त बख़्शाती है। उनकी कोई लुग़त और ज़बान नहीं, उनकी आवाज़ सुनी नहीं जाती। पर सारी ज़मीन में उनकी तार गूँजती है, और दुनिया के किनारों तक उनका कलाम पहुंचता है। उनमें उस ने आप़ताब के लिए ख़ेमा खड़ा किया है, जो दूल्हे की मानिंद ख़ल्वत-ख़ाने से निकल आता है और पहलवान की तरह मैदान में दौड़ने से खुश होता है। अफ़लाक के किनारे से उसकी बरामद है और उसकी गर्दिश उनके दूसरे किनारे तक होती है, उसकी गर्मी से कोई चीज़ छिपी नहीं।” (ज़बूर 19:1-6)

ये मुक़ाम जहाँ एक तरफ़ नास्तिकों को, जो देखते हैं कि आस्मान हैं, पर खुदा की हस्ती से इन्कार करते हैं, जो असर के तो क़ाइल हैं मगर उसके सबब के क़ाइल नहीं, खुदा का क़ाइल करता है।

वहाँ दूसरी तरफ़ बुत-परस्तों की बेवकूफ़ी उन पर ज़ाहिर करता और बताता है कि तुम्हारे ख़यालात बातिल हैं, और तुम्हारा सूरज देवता कुछ नहीं, मगर वो भी उसी ज़िंदा और क़ादिर-ए-मुतलक़ का ही जलाल ज़ाहिर करता है। तुम उसे छोड़कर सूरज की परस्तिश करते हो, हालाँकि उसी खुदा ने ही उसको भी और सारे अज़ाम-ए-फ़लक़ी को नूर दिया है, वो उसके मुहताज हैं। वहाँ तीसरी तरफ़ शम्स-परस्तों और शमासी तबीअत वालों को ये तालीम देता है कि आप़ताब जो बुर्ज अक़ब में आकर

कमज़ोर पड़ जाता है, “यानी आफ़ताब पर देव-ए-जुल्मत उसी वक़्त ग़ालिब आता है, जब वो बुर्ज-ए-अक्रब में जाता है”, तो ये उसी आफ़ताब-ए-सदाक़त के मस्लूब हुए कि वक़्त थोड़े अर्से के लिए जंग करते हुए मग़्लूब होकर फ़त्ह पाकर अज़-सर-ए-नौ अपने पूरे जलाल में ज़ाहिर हो जाने का अक्स-पेशीनी है, जो आसमान में है। उसकी असली सूरत मसीह है, जो सलीब पर मस्लूब हुआ, “ताकि मौत के वसीले से उसको जिसे मौत पर कुदरत हासिल थी, यानी इब्लीस, को तबाह कर दे” (इब्रानियों 2:14) और “उसके कामों को मिटाए।” (1 यूहन्ना 3:8)

फिर सफ़्हा 101 पर ख़्वाजा साहब सूरज-देवता की बाबत लिखते हैं कि “सूरज को ही देख लिया जाये। जिससे हमारे कुल के कुल जिस्मानी मुफ़ाद वाबस्ता हैं। इसकी रोशनी और गर्मी हमारी सब तकलीफ़ात का इलाज करती है। अब उसका घटना-बढ़ना अगर उसकी तकलीफ़ व राहत समझ लिया जाये, उसका गहन में आ जाना उसकी सुकरात मौत करार दी जाये, और उसे ख़ुदा मान लिया जाये, जो इन्सानी जामा में ज़मीन पर आये, तो क्या वो अपनी मौत और तकलीफ़ को बर्दाश्त करके नस्ल-ए-इन्सानी को नजात नहीं देता।”

इबारत तहत-उल-ख़त क़ाबिल-ए-गौर है। इस इबारत के पहले-पहले जो कुछ ख़्वाजा साहब ने कहा है, वो सूरज की बाबत जिस्मानी तौर पर दुरुस्त है। बेशक इन्सान के तमाम जिस्मानी मुफ़ाद का इन्हिसार सूरज की कैफ़ियात-ए-मुख्तलिफ़ा पर है। “लेकिन क्यों उसे ख़ुदा मान लिया जाये, जो इन्सानी जामा में ज़मीन पर आये?” आखिर उसे ख़ुदा मान लेने की वजह तो होनी चाहिए।

हाँ, अगर ख़्वाजा साहब शम्स-परस्तों के हम-अक़्रीदा होना चाहते हैं और जो ख़ुदा नहीं, उसको ख़ुदा मान लें, तो ये और बात है। हम ख़्वाजा साहब को भी शम्स-परस्तों में शुमार कर लेंगे जिनकी वक़ालत वो कर रहे हैं। यही और इसी क़िस्म की और बातें भी तो हैं जिनसे “इंसानों ने इस मुसन्नफ़ा और पाकीज़ा पानी को, जो वही इलाही की शक़ल में ख़ुदा की तरफ़ से यक़साँ सब के लिए नाज़िल हुआ, मुख्तलिफ़ आमेज़िशों से गदला कर दिया।” यही तो “हक़ीक़ी रास्ते से दूर चले जाना” था। इंसान की मुश्रिकाना तबीअत ने इलाहियात छोड़ कर हर एक मज़हर-ए-कुदरत को बुत-परस्ती के रंग में रंग दिया। उन लोगों को अब्बल तो हक़ाइक़ भी मुश्रिकाना रंग में नज़र आ रहे थे। और अगर सफ़ाई दिमाग़ ने हक़ाइक़ को असली रंग में देख भी लिया, तो जिस ज़बान में इज़हार करना था, वो मुश्रिकाना थी।

क्या हमारे मु'अज़िज़ दोस्त भी उन्हीं की पैरवी में तो ये नहीं कह रहे कि “अगर उसे ख़ुदा मान लिया जाये जो इंसानी जामा में ज़मीन पर आए?” जनाब-ए-मन, उन्हीं ने हक़ाइक़ को असली रंग में तो देख भी लिया, “मगर उस से दूर चले गए।” अब हमारा काम ये है कि इन “मुख्तलिफ़ आमेज़िशों”, “मुश्रिकाना रंग”,

“मुश्रिकाना तबीअत” को दूर कर दें, “और हक्काइक़ को असली रंग में” पेश करें। और वो मसीह है, जिस पर सूरज की मुख़लिफ़ कैफ़ियात शहादत देती और दलालत करती हैं।

मुझे तो बहुत ही अफ़सोस आता है कि वकील साहब सूरज-परस्तों की वकालत करते हुए मान रहे हैं कि सूरज खुदा है और कि वो जामा-ए-इंसानी में ज़मीन पर आ गया। हमने देवी-देवताओं के क्रिस्से सुने हैं कि फ़लाँ देवता इंसानी रूप धारण कर ज़मीन पर आ गया, मगर यह कभी नहीं सुना था कि सूरज जामा-ए-इंसानी पहन कर ज़मीन पर आ जाए। ख़ैर, अच्छा है, वो हक़ वकालत तो अदा कर रहे हैं। मंसबी फ़र्ज़ अदा करना भी किसी का काम है। जैसा गुरु वैसा चेला। जब शम्स-परस्तों ने सूरज को खुदा मान लिया, तो अगर आप उनकी वकालत में उसको खुदा न मानें, तो उनकी वकालत ही किस तरह कर सकते हैं? बुक़ला का तो अक्सर काम ही यही है।

अब मैं सिर्फ़ एक और बात का ज़िक्र करके इन पुरानी कहानियों को ख़त्म करता हूँ। यानी अशा-ए-रब्बानी की बाबत, जो वकील साहब के अल्फ़ाज़ों में यूँ है:

“बहरहाल, अशा-ए-रब्बानी के मुतअल्लिक़ जो अक़ीदा ईसाइयों का है, उस अक़ीदे से पुरानी दुनिया ख़ाली न थी। अशा-ए-रब्बानी की रोटी और शराब गोया जनाब मसीह के जिस्म और खून की यादगार है, जिसे चखकर एक परस्तार का जिस्म और खून मसीह का जिस्म और खून हो जाता है। इसी तरह मसीह के खून से इंसान के गुनाहों का धुल जाना भी एक पुरानी बात है। डायूनीस के खून से भी इंसानों की पाकीज़गी होती थी।” (पेगन ऐंड क्रिस्चन क्रीड, सफ़हा 65)

“क़दीमी मिस्री ओसीरस के दुबारा ज़िंदा होने पर अशा-ए-रब्बानी की रस्म मनाते थे। मुक़द्दस रोटी खाई जाती थी, जिस पर काहिन पहले तक्दीस देता था, जिससे वो ओसीरस का गोशत हो जाती थी।” (The Great Law of Religion Origin, मुसत्रिफ़ विलियम्सन, सफ़हा 175) डॉक्टर फ़ीरनीयर अपनी किताब गोल्डन बाउ में एक अमरीकन का हाल लिखते हुए कहते हैं कि “वो लोग माह दिसंबर में अपने बड़े देवता का एक बुत खमीरी आटे से बनाते थे, फिर उसे तोड़कर खाते थे। किंगज़ बारू ने अपनी किताब के सफ़हा 230 पर अहले मैक्सिको की अशा-ए-रब्बानी का ज़िक्र करते हुए लिखा है कि “ये लोग रोटी बनाते, फिर उस के टुकड़े करते और फिर उनका मज़हबी पेशवा उसके छोटे-छोटे टुकड़ों को हर

एक परस्तार के मुँह में डालता और उसे समझाता जाता था कि वे अपने खुदा का गोश्त खा रहे हैं। ये तो ख़ैर पुरानी बातें हैं। आज भी चीनी लोग शराब को कन्फ़्यूशस की तीलियों से बने हुए मुजस्समे पर डालते हैं, फिर उस शराब को पीते हैं और खयाल करते हैं कि कन्फ़्यूशस की बरकत उनमें आ गई। इसी क्रिस्म की बातें चीनी तातारियों में आम तौर पर मिलती हैं, जिन्हें आज फ़ादर गॉर्डर देखकर वही कहता है जो सदियों पहले शहीद जस्टिन ने कहा था: "मैं बड़े ज़ोर से कहता हूँ कि शैतान तातारियों में कैथोलिक कलीसिया की पूरी नक़ल उतार रहा है।" हालाँकि न वहाँ कोई ईसाई गया न यूरोपियन, लेकिन वो लोग बिल्कुल कैथोलिक कलीसिया की बातें करते हैं। हत्ता कि अशा-ए-रब्बानी भी शराब और रोटी से बनाते हैं। ये बातें मैंने अपनी आँखों से देखी हैं।"

(Introduction to the History of Religions, मुसन्निफ़ ज्युन, सफ़हा 148, 219)

"ये मसअला कि इब्रे-आदम ने आकर नस्ल इन्सानी को गुनाह से नजात दी, कोई नया मसअला नहीं। जिन पेगन (मुश्रिक) देवताओं का मैं ऊपर ज़िक्र कर आया हूँ, मथुरा, होरस, हरकियुलिस, एडोनिस्, इन सबकी माएं कुँवारी ही थीं। सब के सब मसीह की सी मौत से मरे या खुद उन्होंने अपनी जान दी। इन सब के खून ने लोगों के गुनाह धोए। ये सब के सब फिर जी उठे। नेपाल और तिब्बत में इंद्र देवता अपने खून से ही इन्सान को नजात देता है। ये खून ही आस्मानी बारिश है जो बारिश के देवता इंद्र के जिस्म से निकलकर ज़मीन के रहने वालों को हर मुसीबत से नजात देता है। दूसरी तरफ़ सूरज देवता के जिस्म से सुर्ख शूवाओं की शकल में खून उतरकर ज़मीन को नई ज़िंदगी बरख़्शाता है। इस ज़िंदगी के बरख़्शाने के अय्याम ईस्टर के दिन से शुरू होते हैं, जिससे दो दिन पहले सूरज देवता बछड़े की शकल में यानी बुर्ज हमल में उस सलीब पर चढ़ता है जो उसकी सालाना हरकत का बैज़वी दायरा है और खत इस्तिवा पर बनाता है। मसीह ने ही पहले इन्सान के गुनाह सिर पर नहीं उठाए। जनाब बुद्ध ने भी एक मौके पर फ़रमाया है: "कुल दुनिया के गुनाह मुझ पर लाद दो ताकि दुनिया नजात पाए।"

(तारीख़ संस्कृत लिट्रेचर, मुसन्निफ़ मैक्स म्युलर)

"सेकंडी न्युया का खुदा, जो खुद ही दरख़्त के ज़रिये से फांसी पर चढ़ा, वो कहता है, "मैं जानता हूँ कि मैं खुद ही फांसी पर चढ़ा था। मुझको बिरछी चुभोई गई। मैंने खुद अडन यानी अपने आप से

ये कहा था कि मैं ऐसा करूँगा।” कृष्ण जी महाराज कहते हैं, “मैं खुद ही कुर्बानी हूँ। ये जो लोग चढ़ावे चढ़ाते हैं, वो मैं ही हूँ।” इंद्र, सो, हरी और दूसरे देवता मुख्तलिफ़ जानवरों की शक्ल में आकर नस्ल इन्सानी को बचाने के लिए कुर्बान होते हैं। शिवजी महाराज कहते हैं, “अस्ल चढ़ावे का जानवर तो मैं हूँ। जिसे तुम मेरे मज़हब पर ज़ब्र करते हो, वो मैं ही हूँ।” बुध मला आ'ला से इन्सान को अज़ाब से बचाने के लिए दुनिया में जन्म लेता है और ये अल्फ़ाज़ कहता है, “मैं अगर इन्सानी जिस्म इख्तियार कर रहा हूँ तो इसलिए नहीं कि कोई ऐश व इशरत करूँ, बल्कि इसलिए कि इन्सानों में पैदा होकर जिस्म और गोशत (इन्सान) को तक्लीफ़ से बचाऊँ, और उनके दुख-दर्द दूर करूँ।”

“चीन का माबूद तीन नाम दुनिया में इसलिए आया कि रास्तबाज़ी को कायम करे, नस्ल इन्सानी को बचाने के लिए और दुनिया को मौत से नजात देने के लिए। वो मरता है क्योंकि उसके नज़्दीक खुदावंद के हुज़ूर इससे बेहतर कुर्बानी नहीं। (Religious Idea, मुसन्निफ़ प्रेग, जिल्द अव्वल, सफ़हा 26) एडोनिस की मौत की याद की रस्म में बड़ा काहिन ये अल्फ़ाज़ कहता है, “अपने खुदावंद पर ईमान लाओ, क्योंकि जो कुछ तकालीफ़ उसने सहीं वो हमारी ही नजात के लिए सहीं।” अल-गर्ज़, कुल के कुल ममालिक जो ज़माना-ए-क़दीम में कायनात और अनासिर की मुख्तलिफ़ हैसियतों के परस्तार थे और उन्होंने कायनाती कैफ़ियात को खुदा और देवते बना रखा था, उनमें से अक्सर सूरज परस्त थे।” (यनाबीअ-उल-मसीहियत, सफ़हा 98-101)

मैंने ये तवील इक्तिबास इसलिए किया है कि हमारे वाइज़ीन के पास क़दीम आलमगीर अक्राइद का एक ख़ास्सा ज़खीरा रहे, और वो भी मुख्तलिफ़ के क़लम से निकला हुआ। अगर मैं मुख्तसर अल्फ़ाज़ में इसका खुलासा लिखूँ तो यूँ होगा कि क़दीम ज़माने से दुनिया की तमाम अक्वाम में गुनाह का एहसास, माफ़ी की ज़रूरत, सज़ा से बचने के लिए कुर्बानी की ज़रूरत, अपने आमाल पर नहीं बल्कि बचाने वाले पर ईमान की लज़ूमियत, कफ़्रारे की ज़रूरत वगैरह, ये सब अक्राइद आलमगीर हैं। रंगत मुश्रिकाना है, मगर हक़ीक़त यगाना है।

और इस मसीही उसूल की उमूमियत की तस्दीक़ और ताईद हर ज़माने और मुल्क में होती है कि “बग़ैर ख़ून बहाए गुनाहों की माफ़ी नहीं।” (इब्रानियों 9:22) कामिल कुर्बानी वही है जो कि मरकर जी उठे। अक्राइद तो ला-रेब (बेशक) तमाम अक्वाम में क़दीम से चले आते हैं। मगर जिन हस्तियों का वो क़ौम में ज़िक़र करती हैं

और जिन के साथ इन अक्काइद को मन्सूब किया जाता है, वो ख्वाजा साहब ही के बयान के मुताबिक़ तख़य्युल (ख़यालों) की हस्तियाँ थीं, दरअसल कोई तारीख़ी हक़ीक़त न थीं।

“कायनात और अनासिर की मुख़लिफ़ हैसियतों ही के परस्तार थे और... उन्हीं को उन्होंने ख़ुदा और देवते बना रखा था।” तो इससे ये अम्र भी मुबर्हन (ज़ाहिर) होता है कि उनके अफ़आल भी, मसलन “ख़ुद ही दरख़्त के ज़रीये फ़ांसी पर चढ़ना” या “जान दे देना”, (ऐसी बातें इन्हीं खयाली देवताओं से मन्सूब थीं) उन अक्वाम के वहमियात और ज़हनियात में से थे, दरअसल कोई इस किस्म का फ़े’अल सादिर नहीं हुआ था। गरज़ कि ये काम किसी हस्ती से मा’रिज़-ए-अमल में ना आए थे, तो इस से ये बात भी साफ़ हो जाती है कि उन अक्वाम के सिर्फ़ इस किस्म के अक्काइद ही थे कि आइन्दा किसी ज़माने में ऐसा-ऐसा ज़हूर में आएगा। तो ये उनका ईमान हुआ जो वो किसी आने वाले नजात-दहिंदे पर रखते थे। तो फिर क्या उन अक्काइद पर से “मुश्रिकाना रंग” नहीं उतर गया? क्या वो एक नजात-दहिंदे के मुंतज़िर ना थे? क्या ये मसीहियत की क़दामत और उसका आलमगीर और मिंजानिब-अल्लाह होना न होगा? क्या ये कहना जायज़ ना होगा कि ये आरज़ू और उम्मीद का इदराक़ उनके अंदर ही ख़ुदा ही के इल्का किए (डाले) हुए थे? अगर ना थे तो कहाँ से आए?

क्यों वकील साहब, अगर वो सब “तख़य्युल की (खयाली) हस्तियाँ” हैं और उनके अफ़आल वहमियात (वहमों) से हैं, तो क्या आपके इस बयान में और इस से पहले की तमाम बयानात में तज़ाद (टकराव) पाया नहीं जाता? जहां आपने उनको ऐसे तौर पर बयान किया है जिससे उनकी तारीख़ी हस्ती का गुमान होता और खयाल में आता है कि ये सब अफ़आल ज़रूर उनसे सरज़द हुए।

मेरी दानिस्त में आपने दुरुस्त वकालत नहीं की। आख़िर में सिर्फ़ ये बता देना चाहता हूँ कि आपने जो अशा-ए-रब्बानी की बाबत लिखा है कि “जिसे चख़ कर एक परस्तार का जिस्म और खून मसीह का जिस्म और खून हो जाता है।” इस के लिए इंजील में से कोई हवाला नहीं दिया जिससे सराहतन या किनायतन आपकी मतलब-बरारी हो जाती। हमारा ना तो ये अक़ीदा है और ना ही कलाम-ए-मुक़द्दस में इस किस्म का कोई इशारा ही पाया जाता है। ये महज़ अपनी “ख़ुश-एतिक़ादी” है, लिहाज़ा सदाक़त से मुस्ता’बद (बहुत दूर) है।

अब आख़िर में मुझे इस बात पर गौर करने की इजाज़त दीजिए कि ये बातें और ऐसे अक्काइद और रिवायत तमाम मुतफ़र्रिक़ ममालिक में और तमाम मुतफ़र्रिक़ अक्वाम में, जिनकी बोली अलग, जिनके दस्तुरात अलग, आबो-हवा अलग, मिज़ाज मुतफ़र्रिक़, ऐसे क़दीम ज़माने से लगातार किस तरह चले आए? ये अक्काइद उनके

दिलो-दिमाग में कहाँ से आ गए? सबब और असर का आलमगीर क़ानून तो दुनिया में हर जगह और हर काम में सायर और दायर (जारी) है। तो फिर क्या वजह कि ऐसे असरात तो मौजूद हों, मगर उनके अस्बाब ना हों? उन असली अक्काइद पर "मुश्रिकाना रंग" और इसका सबब "मुश्रिकाना तबीअत" तो मान लिया, लेकिन उनके अंदर इन मो'तकिदात का बानी कौन है? यनाबीअ-उल-मसीहियत के मुसन्निर ने इन सवालों के दो जवाब दर्ज किए हैं, एक क़दीम मसीही बुजुर्गों का जवाब, दूसरा खुद अपना। पहले मैं क़दीम मसीही बुजुर्गों का जवाब वहाँ से नक़ल करता हूँ। वो ये है:

"सेंट टरटोलेन लिखते हैं, शैतान का तो काम ही सदाक़त को रोकना है। चुनान्हे अशा-ए-रब्बानी को हूबहू नक़ल वो अपने बुतों के मुताल्लिक़ कराता है। वो अपने पैरौओं को बपतिस्मा भी देता है, (और) उनसे वा'दा करता है कि मुक़द्दस हौज़ (जिसके पानी से बपतिस्मा दिया जाता है) से ही उन्हें गुनाह की माफ़ी मिलेगी। बपतिस्मा के ज़रीये वो उन्हें मज़हब मथुरा में दाख़िल करता है। इसी तरह उनकी पेशानी पर निशान करता है। रोटी की तक्दीस भी करता है। दुबारा जी उठने का भी एक निशान क़ायम करता है, यानी अपने परस्तारों को पानी से बपतिस्मा देकर उन्हें गुनाहों से पाक करता है। वो हुक्म देता है कि उसके बड़े पादरी तो एक शादी करें, लेकिन उसके हाँ कुंवारीयां भी हैं और राहिब भी हैं।"

"जस्टिन मार्टर फ़र्मते हैं, "रसूलों ने जो तफ़्सीरें लिखीं, जिन्हें हम इंजील कहते हैं और वे हम तक पहुंची हैं। उन में मसीह रसूलों को हुक्म देता है, "फिर उसने (मसीह ने) रोटी ली और खुदा का शुक्र किया और कहा कि "इस बात को मेरी याद में करते रहना, ये मेरा जिस्म है।" फिर उस ने पियाला लिया और शुक्र अदा किया और कहा कि "ये मेरा खून है," और पियाला उनको दिया। ये सारी बातें ख़बीस रूहों ने मथुरा को सिखा दी हैं और मथुरा की याद में उसकी परस्तिश में हो रही हैं। फिर मसीह की पैदाइश का, जो तवीले में हुई, हवाला देते हुए यही राहिब लिखता है कि "बेशक मसीह की पैदाइश उसी दिन हुई है जिस दिन तवीला औजेन में सूरज पैदा हुआ। बल्कि मसीह की पैदाइश जो तवीले में हुई, तो ये दरअस्ल मथुरा की पैदाइश का नमूना है जो ज़रतशती ग़ार में हुई।" सेंट अगस्टेन किसी क़द्र फ़ख़ के साथ फ़र्मते हैं, "हम क्रिसमस के दिन को कुफ़्रार की तरह नहीं मनाते, जो उनके हाँ की पैदाइश का दिन है, बल्कि हम तो उसी दिन को इसलिए मनाते हैं कि उस दिन सूरज का पैदा करने वाला पैदा हुआ।" (सफ़हा 83, 84)

फिर अपना जवाब यूँ लिखते हैं,

“ऐसी ही और बहुत-सी बातें किस तरह दुनिया में पैदा हो गईं, या ये रिवायत एक ही खत-व-खाल में क्यों मुख्तलिफ़ ममालिक में दायर व सायर (जारी) हो गईं, हालाँकि उनमें मैक्सीको भी है जो दीगर ममालिक से कई समुन्दर पार है। इस पर यूरोपियन मुसन्निफ़ीन ने हैरत भी ज़ाहिर की है, लेकिन ये सब की सब बातें ज़ेल के उमूर मद्द-ए-नज़र रखने से हल हो जाती हैं। आलम-ए-हैवानात में इन्सान ही वो ज़ी-रूह वजूद है जो अपने से बड़ी हस्ती का तब‘अन परस्तार है। नफ़ा व नुक़सान या राहत व तकलीफ़ जिसका पेश-अज़-वक़्त एहसास भी इदराक-ए-इन्सानी तक ही मख़सूस है। ये दोनों बातें उसकी गर्दन उन के आगे झुका देती हैं, जिनसे उसे नफ़े की उम्मीद या नुक़सान का ख़तरा हो। बुत-परस्ती की कुल रिवायत को देख लिया जाये, उन सब की तह में यही दो बातें हैं। सरस्वती देवी और काली माई की परस्तिश भी नफ़ा व नुक़सान ही के झगड़े हैं।”

“ख़ुदा त‘आला की बनाई हुई चीज़ों में से, चीज़ें इन्सान की सरसरी निगाह ने नफ़ा व राहत का बाइस देखीं, वही ऐसे वक़्तों में जबकि इल्हाम-ए-इलाही इन्सानी हाथों से मग़शूश (मिलावट) हो गया, इन्सान का रब और हादी बन गईं। बिल-मुक़ाबिल वो वजूद या वो वाक़ि‘आत जो मुखिल-ए-नफ़ा व राहत हुए, वही शैतान या उनके ख़ुदाओं के दुश्मन कहलाए। बा‘ज़ गर्दनें उनके आगे भी झुक गईं। अब अगर इन तमाम चीज़ों को ख़ुदा की मख़्लूक़ ना माना जाये, और मज़ाहिर-ए-कुदरत को ही मुख्तलिफ़ ख़ुदा और गिरोह-ए-शयातीन मान लिया जाये, जैसे कि इस्लाम से पहले कुल मज़ाहिब-ए-बातिला ने माना, तो तमाम मज़ाहिब-ए-कुदरत में अगर कोई वजूद व रब बल्कि रब-उल-अर्बाब कहलाने का मुस्तहिक़ है, तो वही नय्यर-ए-आज़म आफ़ताब है।” (सफ़हा 86, 87)

□□ □□ □□ मज़कूर □□□□ रायों □□□ □□ □□□□ □□□ □□□□
 □□□□□□□□ □□□ क़ाबिल □□□□□□ □□□□। □□□□□□□ □□ “शैतान □□
 □□ □□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□ □□।” □□ □□□□ □□□□□ □□□□
 □□ □□□□ दे □□ “□□□□□□ नक़ल” □□□□ “□□ □□ □□□□□□” □□□□ □□
 □□□□। □□□□□ □□□□□□ □□ □□ □□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□
 □□□□□ □□□□□ □□□□। □□□□□□□ □□□□ फ़े□□ □□□□ □□ □□□□□
 □□ □□ म‘अनी हैं, कि उस □□ □□ □□□□ □□□□। □□ □□□□□□ को उस

अगर इन बातों का एहसास और इदराक तबअन इन्सान के अंदर पाया जाता है और उन ज़रूरतों को तबअन महसूस करके वो नय्यर-ए-आज़म आफ़ताब को इन मक़ासिद के लिए अपना रब बना लेते हैं, तो उनसे ये अम्र तंकीसी सादिर होता है। यानी ये कि ऐसे खयालात और ज़रूरत जो तबअन इन्सान को महसूस हुईं, वो कहाँ से आईं? अगर ये इन्सान की मादी तर्कीब के साथ ही और उसी में से पैदा हुईं, जैसे भूक, प्यास और दीगर तमाम मादी ताक़तें और ज़रूरतें (यानी खारिज (बाहर) से) उसके अन्दर दाख़िल नहीं हुईं, तो ख़ुदा के सिवा, उनमें इन एहसासात को वदीअत करने वाला और कोई नहीं हो सकता। इस सूरत में उन तमाम बातों की अस्ल, दुनिया की तमाम क़दीम क़ौमों में "इल्हाम-ए-इलाही" से दायर और सायर (जारी) हुईं। मगर वो "इल्हाम-ए-इलाही इन्सानी हाथों से मग़शूश (मिलावट) हो गया।" इस को ग़श की हालत से सही व सलीम हालत में ले आना भी "इन्सानी हाथों" ही का काम है, मगर ज़रिया और वो ख़ुदा की रूह की मदद और किताब-ए-मुक़द्दस का ख़ुलूस-ए-क़ल्ब से मुतालआ और खोज़ करने ही से हो सकता है। "मुश्रिकाना रंग" उतार दो तो अस्ल इल्हाम-ए-इलाही निकल आएगा, जो सहीफ़ा-ए-फ़ित्रत, ज़मीर-ए-इन्सानी के तक्राज़े और किताब-ए-मुक़द्दस के मुताबिक़ है।

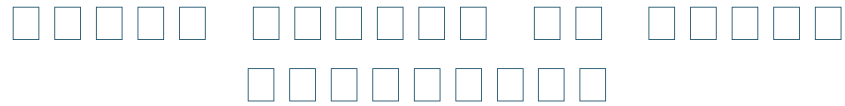
सूरज से इस जहान के नफे व ज़रर (नुक़सान) हो सकते हैं और हो भी रहे हैं, मगर इस ज़िंदगी के बाद किसी दूसरी ज़िंदगी में इसका कुछ भी दख़ल या ताल्लुक़ नहीं। ये एक बदीही (साबित) अम्र है। इसलिए उन अक्वाम का दूसरी ज़िंदगी के मतलब से "नय्यर-ए-आज़म" आफ़ताब को ख़ुदा या नजात-दहिंदा मानना, बुत-परस्ती या शम्स-परस्ती है। इसी और इसी के मुताल्लिक़ दीगर उमूर वो मुख़लिफ़ इन्सानी आमेज़िशें हैं जिन्होंने "उस मुसफ़्फ़ा और पाकीज़ा पानी को, जो वही इलाही की शक्ल में ख़ुदा की तरफ़ से सब के लिए यक़साँ नाज़िल हुआ, गदला कर दिया।"

ये मेरी यही राय है, जो कलाम-ए-इलाही के मुताबिक़ है और जिसका ज़िक़्र मैं पहले मज़मून में किसी जगह कर आया हूँ। यहां उसको दोहराने की ज़रूरत नहीं। और अगर वो ये सब कुछ जिस्मानी नफ़ा व ज़रर (नुक़सान) के बीम व रजा से किया करते थे, तो वो अक्ल के और तजुर्बात रोज़मर्रा के ख़िलाफ़ और फुज़ूल था। ये तो एक बदीही (साबित-शुदा) अम्र है कि वो सूरज के रोज़मर्रा के तासिरात से महफूज़ हरगिज़ नहीं रह सकते थे और ना ही उसके तासिरात और अमल की मुख़ालिफ़त ही कर सकते थे। और अगर करते तो फ़ौरन बर्बाद हो जाते। ये तो तक्दीर-ए-मुबर्रम है, या आपके कहने के मुताबिक़, ये वही "इस्लाम" है जिसकी आस्मान व ज़मीन की हर एक चीज़ तौअन व करहन (ख़ुशी या ना-ख़ुशी) इताअत करती है, जिसकी बाबत आप ख़ुद फ़र्माते हैं कि "कोई है जो इस सदाक़त से अमलन इन्कार करे और आन-ए-वाहिद में उसकी ज़िंदगी का ख़ातिमा ना हो।"

क़वानीन-ए-तबई की खिलाफ़वर्ज़ी की ना तो तौबा है, ना माफ़ी, ना वो किसी के कफ़ारे से दूर हो सकती है, और ना ख़ुशू'अ व खज़ू'अ से। इसके मुताल्लिक़ ना तो ईमान रखने से कुछ फ़ायदा पहुंच सकता है, ना ईमान ना रखने से कुछ ज़रर (नुक़सान) पहुंच सकता है। ये सारी बातें तो रोज़मर्रा के मुशाहदात और तजुर्बात हैं। इन तमाम उमूर की बाबत यक़ीनात रखते हुए उनका ऐसा-ऐसा करना फ़ुजूलियात से था जिसकी कुछ वक़अत नहीं। लेकिन अगर ये बातें रूहानियत से थीं, तो आपका ये कहना बिल्कुल दुरुस्त है कि:

“जब अल्लाह त'आला ने एक ही चीज़ से नस्ल-ए-इन्सानी की जिस्मानी परवरिश की, तो ये भी ज़रूरी था कि रूहानी परवरिश भी एक ही तरीक़े से, एक ही चीज़ से हो।” (सफ़हा 2)

चुनान्चे ऐसा ही हुआ। जैसा कि आगे चलकर ख़्वाजा साहब ही की तहरीर से दिखाऊँगा कि किस तरह से ख़ुदा ने ईरान, बाबिल, फ़रिहिया या सिरिया, कार्थेज, यूनान, रोमा, मिस्र, मैक्सीको की क़दीम क़ौमों की एक तरफ़ और यहूदी, मसीही और मुहम्मदी क़ौमों की दूसरी तरफ़, रूहानी परवरिश भी एक ही तरीक़े से और एक ही चीज़ से की। हाँ, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि उन क़ौमों ने इस “मुसफ़्फ़ा और पाकीज़ा पानी को... मुख़लिफ़ आमैज़िशों (मिलावटों) से गदला कर दिया।” (सफ़हा 3) और मुहम्मदी क़ौम ने अपने हाथों से उसे मग़शूश (मिलावटी) कर दिया। और यहूदी क़ौम ने आँख़ रखते हुए भी अभी तक उसे देखा ही नहीं। मगर मसीही मज़हब ही दुनिया में वो वाहिद मज़हब, वो मज़हब-ए-हक्का है; वो सच्चा इस्लाम है, वो एक ही चीज़ है, वो एक ही तरीक़े, जिसके उसूल क़दीम और आलमगीर हैं। जो इन्सान के एहसास-ए-बातिनी और इक्तज़ा-ए-रूहानी के बिल्कुल पूरा करने वाले हैं, और जिनका ज़हूर हक़ीक़ी तारीख़ी वाक़ियात में इन्सान पर हो गया। मसीही मज़हब ही वो मेयार है जिसकी रौशनी में वो क़दीम, यगाना, आलमगीर इस्लाम के उसूल की शनाख़्त हो जाती है, जो मज़क़ूरा बाला दस और दीगर अक्वाम के मज़ाहिब में नहीं आ सकती।



ख्वाजा साहब का ये मज़मून किताब यनाबीअ-उल-मसीहियत में 17 सफ़हात में आया है। मगर सिर्फ़ दो बातें पेश की हैं, यानी फ़ल्सफ़ा-ए-कलाम और फ़ल्सफ़ा-ए-तस्लीस। एक की बाबत बताया है कि वो हकीम फ़ाईलो से लिया गया है, और दूसरा अफ़लातून का या यूनानी फ़ल्सफ़ा है। और इन हर-दो के फ़ल्सफ़े का कुछ तो मुख्तसरन इक्तिबास है और कुछ अपनी इबारत में उनका बयान। तकरार-ए-कलाम और ग़ैर-मुताल्लिका उमूर भी पाए जाते हैं। मैं अपना क़ीमती वक़्त और मेहनत को फुज़ूलियात में सर्फ़ (खर्च) नहीं करना चाहता, इसलिए सिर्फ़ इतना ही इक्तिबास करूंगा जिससे ये दोनों तालीमात बखूबी ज़ाहिर हो जाएँ, और फिर सिर्फ़ ये बताऊंगा कि इंजीली फ़ल्सफ़ा इन दोनों से अलग है। पहले मैं फ़ाईलो हकीम की तालीम का इक्तिबास करूंगा और उसका मुकाबला यूहन्ना के फ़ल्सफ़े से करूंगा। फ़ाईलो की बाबत और उसका फ़ल्सफ़ा हस्ब-ए-ज़ैल है:

“ये इस्राईली फ़ल्सफ़ी बहुत-सी किताबों का मुसन्निफ़ है। ये अपने वक़्त का एक मुक़्तदिर इन्सान था। बल्कि एक दफ़ा यहूदियान-ए-सिकंदरिया की तरफ़ से सफ़ीर होकर कीली ग्युला कैसर-ए-रूम के दरबार में भी गया था। मसीह की पैदाइश से एक ही नस्ल पहले पैदा हुआ था। इसकी तसानीफ़ की चंद किताबों से ज़ेल के इक्तिबास लेता हूँ।

“ख़ुदा-ए-अबदी का अबदी कलाम ही तमाम चीज़ों की बुनियाद है।” (De Plantatione N.1:331) “कलाम ही ख़ुदा की तस्वीर है। कुल ज़ी-अक्ल मख़्लूक से वही पहले पैदा हुआ। वो ख़ुदा-ए-वाहद के साथ बग़ैर किसी फ़र्क़ के बैठा हुआ है।” (De Profugis 1:561,16) “वही उसका पहलौठा बेटा है।” (De Agricultura 1:308) “ख़ालिक-ए-कायनात ने अपने कलाम को, जो आस्मान में सबसे क़दीम व आला है, ये इज़ज़त दी कि वो ख़ालिक व मख़्लूक में सिफ़ारशी या शफ़ी ठहरे।” (Quis Rerum Divinarum Heres Sit 1:501) “लिहाज़ा कलाम ही तमाम फ़ानी चीज़ों के लिए (ख़ुदा के आगे) वकील है।” (ibid. 502) “वही कलाम इन्सान का, जो हमेशा गुनाह करता है, शफ़ी है। कलाम ही ख़ुदा का इन्सान की तरफ़, जो उसका मातहत है, रसूल है। वही (कलाम) सब चीज़ों पर हुक्मरान है।” (ibid. 501) “कौन ज़ी-फ़हम इन्सान है जो आममतुत्रास (लोगों) के आमाल देखकर ख़ुदा-ए-नजात-दहिंदा को मुखातिब करके ये न

पुकार उठे कि वही (खुदा) गुनाह के बोझ उठाए और रूह-ए-खाती की क्रीमत या तावान देकर उस रूह-ए-खाती को अज़-सर-ए-नौ असली बेलौस हैसियत तक पहुंचाए।” (De Confusione Linguarum 1:418)

इसलिए खुदावंद हर एक इन्सान को ताकीद करता है कि वो ज़िंदगी की दौड़ में कलाम के मुताबिक़, बिला कम व कास्त (बगैर कमी-बेशी के) अपना रास्ता तज्वीज़ करे। कलाम ही तमाम हिक्मत का सरचश्मा है। इसी मुक़द्दस चश्मे से पानी पीकर इन्सान मौत की जगह हयात-ए-अबदी पाता है। (De Profugis 1:560, 31) हम तस्लीम करते हैं, कि कलाम ही बड़ा काहिन है, वो बिल-इरादा व बिला-इरादा हर क्रिस्म के गुनाहों से पाक है, क्योंकि वो आस्मानी पैदाइश है। (ibid. 1:562, 13) खुदा का कलाम तय्यब और तमाम आज़ारों से नजात-दर्हिदा है। (De Legum Allegoriae 1:122, 17) अगरचे हर एक शख्स खुदा का फ़र्ज़न्द कहलाने के क़ाबिल नहीं, ताहम उसे अपने खयालात की ऐसी इस्लाह करनी चाहिए कि खुदावंद के पहलौठे बेटे (कलाम के हालात) के मुताबिक़ उसके हालात हो जाएं। कलाम फ़रिश्तों से भी पहले पैदा हुआ। इसके (कलाम के) बहुत-से नाम हैं, (मसलन) हुक्म-ए-खुदा का नाम, कलाम, इन्सान की तस्वीर। (De Conf. Ling. 1:427) खुदा उसी कलाम के ज़रीये, जिससे उसने हर एक चीज़ को बनाया, नेक इन्सानों को पस्ती से उठाकर अपने कुर्ब में ले आया। (De Sacrificiis Abelis et Caini 1:165, 5) खुदा के तमाम काम कामिल और गलती से मुनज़ज़ह (पाक) हैं। खुदावंद ने अपने पहलौठे यानी कलाम को इसी तरह अपने मुक़द्दस गल्ले की हिफ़ाज़त के लिये मुक़र्रर किया है जिस तरह कोई ताक़तवर बादशाह अपना नायब मुक़र्रर करता है। (De Agricultura 1:308) मुक़द्दस कलाम, जो बड़ा काहिन और खुदा का पहलौठा हैई (De Somniis 1:653), वही उसके मुक़द्दस गल्ले का गड़ेरिया है। (De Agric. 1:308) वो कलाम इन्सान की शक़ल में (De Confus. Ling. 1:427) खुदा का तर्जुमान है। (De Leg. Alleg. iii,73)

जिस तरह इन्सान सूरज को तो नहीं देख सकता, लेकिन उसके इन-इकास को ही सूरज समझता है, उसी तरह खुदा का कलाम भी, जो उसकी तस्वीर है, खुदा समझा गया। (De Somn. 1:40, 44) रब्बानी कलाम जो सबसे पहले पैदा हुआ, वही आस्मानी गिज़ा

है। वही रोटी है, यानी रूह-ए-इन्सानी के लिये ख़ुदा की मुक़रर-कर्दा ग़िज़ा। (De Quod Deterius Potiori Insidiari Soleat 1:213-45, De Leg. Alleg. 120,34) ख़ुदा की ऊहर-ऊहर दो आ'ला हस्तियाँ हैं जिनकी सिफ़ात नेकी और कुद्रत हैं, और उनके दर्मियान उलूहियत है। और वो ख़ुदा उनसे मुतहिद है। (De Sacrificiis 1:141, 12) कलाम-ए-मुक़द्दस, बड़ा काहिन, बिला-इरादा या इरादा गुनाहों से पाक है, "इसी लिये उसका सर ममसुह हुआ।" (De Somniis 1:653), यानी और क़ाबिल-ए-एतबार बअस्बातत नेअमत ईमान ही है। (De Abrahamo 11:38) हर एक इन्सान के लिये, जो बाप के अहकाम बजा लाता है, ज़रूर है कि वो उसके बेटे के पास, जो वकील है, जाये ताकि उसके (इन्सान के) गुनाह बख़्शे जाएं, और हर क्रिस्म की नेकी हासिल कर सके। (De Exsecrationibus 11:43, 29) इस क्रिस्म के इन्सान नजात-दहिंदे और रहीम ख़ुदा से नजात हासिल करेंगे, और कलाम के मुताबिक़ अपने हालात करके निहायत बर्गुज़ीदा और आ'ला फ़ायदा हासिल करेंगे। (ibid. 11:35) कलाम ही दुनिया की रोशनी से है। (De Somniis 106:41) ख़ुदा का क़ाइम-मक़ाम है। (De Leg. Alleg. 1:129,4) और उसका प्यारा बेटा है। (De Somniis 1:656,48)

(यनाबीअ-उल-मसीहियत सफ़हा 111 से 115)

फिर हमारे वकील साहब सफ़हा 6 पर लिखते हैं...

"अल-ग़ाज़ इस अक़ीदे में एक भी बात नहीं, जो हकीम मौसूफ़ (फ़ाईलो) के मो'तकिदात में न आ गई हो। अब इस मसीही फ़िल्सफ़े के साथ मसअला कफ़़ारा, यानी ख़ुदा का इन्सानी गुनाहों को उठाने के वास्ते ज़मीन पर आना (और यह बात भी हकीम मौसूफ़ ही की है), और दास्तान-ए-सलीब, फ़र्ज़ी उठने की कहानी, और आस्मान पर चढ़ जाना, वो कौन-सी बात अब बाक़ी रह गयी है जिसे हम इलाही इल्हाम की तरफ़ मन्सूब करें? इसी के साथ मुनासिब मालूम होता है कि यूहन्ना और पौलूस का नज़रिया भी "कलाम" के मुताल्लिक़ दर्ज कर दिया जाये, ताकि फ़ाईलो के और यूहन्ना के और पौलूस के नज़रिया के दर्मियान मुक़ाबला हो जाये। चुनान्चे यूहन्ना का नज़रिया ये है कि...

“इब्तिदा में कलाम था, और कलाम खुदा के साथ था। यही इब्तिदा में खुदा के साथ था। सारी चीज़ें उसके वसीले से पैदा हुईं, और जो कुछ पैदा हुआ है, उसमें से कोई चीज़ भी उसके बग़ैर पैदा नहीं हुई। उसमें ज़िंदगी थी, और वो ज़िंदगी आदमियों का नूर था।” (यूहन्ना 1:1 से 4) “और कलाम मुजस्सम हुआ और फ़ज़ल और सच्चाई से मामूर होकर हमारे दरमियान रहा, और हमने उसका ऐसा जलाल देखा जैसा बाप के इकलौते का जलाल।” (ईज़न आयत 14) “यह खुदा का बर्त है जो दुनिया के गुनाह उठा ले जाता है।” (ईज़न आयत 29) “□□ ख्रिस्तिस यानी मसीह है।” (ईज़न आयत 41) “इस ज़िंदगी के कलाम की बाबत, जो इब्तिदा से था, और जिसे हमने सुना और अपनी आँखों से देखा, बल्कि ग़ौर से देखा और अपने हाथों से छूआ...” (1 यूहन्ना 1:1-2) “तो खुदा का बेटा तो इस्राईल का बादशाह है।” (ईज़न आयत 49) “इब्रे-आदम है।” (ईज़न आयत 51) “दूल्हा है।” (यूहन्ना 3:29) “जो बेटे पर ईमान लाता है, हमेशा की ज़िंदगी उसकी है।” (3:36) “दुनिया का मुंजी।” (4:42) “ज़िंदगी की रोटी।” (6:35) “जो रोटी आसमान से उतरी।” (6:41) “जो यह रोटी खायेगा, वो अबद तक ज़िंदा रहेगा।” (6:58) “दुनिया का नूर।” (8:12) “भेड़ों का दरवाज़ा।” (10:7) “अच्छा चरवाहा।” (10:11) “अच्छा चरवाहा भेड़ों के लिये अपनी जान देता है।” (आयत 11 ईज़न ईज़न) “□□ क्रियामत और ज़िंदगी है।” (11:25) “खुदा का बेटा मसीह।” (11:27) “जो मुझ पर ईमान लाता है, वो मुझ पर नहीं बल्कि मेरे भेजने वाले पर ईमान लाता है, और जो मुझे देखता है, वो मेरे भेजने वाले को देखता है।” (12:44-45)

“अंगूर का हक़ीक़ी दरख़्त है।” (15:1) “हमेशा की ज़िंदगी यह है कि वो तुझे, खुदा-ए-वाहिद और बर-हक़ को, और उस मसीह को जिसे तूने भेजा है, जानें।” (17:3) “राह और हक़ और ज़िंदगी मैं हूँ, कोई मेरे वसीले बग़ैर बाप के पास नहीं आता।” (14:6) “उसके बेटे का खून हमें तमाम गुनाहों से पाक करता है।” (1 यूहन्ना 1:7) “□□ मददगार, वकील, शफ़ी है।” (1 यूहन्ना 2:1) “वही हमारे गुनाहों का कफ़़ारा है, और न सिर्फ़ हमारे ही गुनाहों का बल्कि तमाम दुनिया के गुनाहों का भी।” (1 यूहन्ना 2:2) “सच्चा गवाह, और मुर्दों में से जी उठने वालों में पहलौठा, और दुनिया के बादशाहों पर हाकिम।” (मुकाशफ़ा 1:5) “आदमज़ाद सा एक शख़्स...” (मुकाशफ़ा 1:12) “मैं अक्वल और आख़िर और

ज़िंदा हूँ, मैं मर गया था और देख, अबद-उल-आबाद ज़िंदा रहूँगा, और मौत और आलम-ए-अर्वाह की कुंजियाँ मेरे पास हैं।" (1:7-8) "जिसके पास खुदा की सात रूहें हैं और सात सितारे।" (3:1) "जो कुदूस और बरहक़ है, और दाऊद की कुंजी रखता है, जिसके खोले हुए को कोई बंद नहीं करता, और बंद किये हुए को कोई खोलता नहीं।" (3:7) "अमीन और सच्चा, और बरहक़ गवाह, और खुदा की खल्क़त का मबदा।" (3:14) "यहूदाह के क़बीले का बब्बर, जो दाऊद की अस्ल है।" (5:5) "गोया ज़बह किया हुआ एक बर्दा..." (आयत 6) "ज़बह होकर अपने खून से हर एक क़बीले और अहले ज़बान, उम्मत और क़ौम में से खुदा के वास्ते लोगों को ख़रीद लिया।" (5:6) वग़ैरह-वग़ैरह,

"और भी बहुत बयान यूहन्ना की तस्वीफ़ात में पाए जाते हैं, मगर तवालत की वजह से कलम-अंदाज़ किये जाते हैं। लेकिन थोड़ा-सा पौलूस का नज़रिया भी "कलाम" की बाबत दर्ज कर देना ज़रूरी मालूम देता है ताकि फ़ाईलो, यूहन्ना और पौलूस के फ़ल्सफ़ा-ए-कलाम में उमूर-ए-इश्तराक़ व माबा-उल-फ़िराक़ ज़ाहिर हो जायें।"

पेशतर इस से कि मैं फ़ल्सफ़ा-ए-कलाम की बाबत पौलूस रसूल की तालीम का खाका पेश करूँ, यह बता देना ज़रूरी समझता हूँ कि उस ने मसीह के बारे में अगरचे लफ़ज़ "लोगास" कभी इस्तेमाल नहीं किया, तो भी तसव्वुर वही है जो यूहन्ना रसूल के नज़रिये में पाया जाता है। वजह इसकी गालिबान ये मालूम देती है कि वो अपने क़ारईन व सामिईन (पढ़ने और सुनने वालों) के सामने सिर्फ़ "मसीह-ए-मस्लूब" और उसकी सलीब को पेश करना चाहता है और फ़ल्सफ़ा या लफ़ज़-ए-दीगर "हिकमत" से बिल्कुल एहतिराज़ करना चाहता है, क्योंकि उसकी नज़र सिर्फ़ मसीह-ए-मस्लूब पर थी और उसी पर वो फ़िदा था। चुनान्चे वो खुद फ़रमाता है:

"ऐ भाइयो! जब मैं तुम्हारे पास आया और तुम में खुदा के भेद की मुनादी करने लगा, तो आ'ला दर्जे की तक़रीर या हिकमत के साथ नहीं आया। मेरी तक़रीर और मेरी मुनादी में हिकमत की लुभाने वाली बातें न थीं, बल्कि वो रूह और कुदरत से साबित होती थीं, ताकि तुम्हारा ईमान इन्सानों की हिकमत पर नहीं बल्कि खुदा की कुदरत पर मौकूफ़ रहे।" लेकिन साथ यह भी कहता है कि "हम कामिलों में हिकमत की बातें कहते हैं, लेकिन इस जहान की और उस जहान के नेस्त होने वाले सरदारों की हिकमत नहीं, बल्कि हम खुदा की वो पोशीदा हिकमत भेद के तौर पर बयान करते हैं, जो खुदा ने जहान के शुरू से पेशतर हमारे जलाल के वास्ते मुक़र्रर की थी।" और वो मसीह है, "जो खुदा की कुदरत और खुदा की हिकमत है।" (1

कुरिन्थियों 1:24) यानी मसीह में वो दोनों बातें मौजूद हैं, या वो खुद वो दोनों बातें हैं जिनकी तलाश यहूदियों और यूनानियों दोनों क्रौमें कर रही थीं। चुनाच्चे फ़रमाता है:

“यहूदी निशान चाहते हैं और यूनानी हिकमत तलाश करते हैं।” (1 कुरिन्थियों 1:22) पस मसीह-ए-मस्लूब, जो यूहन्ना रसूल के बयान के मुताबिक़ “कलमा-ए-मुजस्सम” है, वो पौलूस रसूल के नज़रिये में खुदा की कुदरत और खुदा की हिकमत (साफ़ियान) है। (1 कुरिन्थियों 1:24) “खुदा की तरफ़ से हिकमत ठहरा, यानी रास्तबाज़ी, और पाकीज़गी और मख़्लिसी।” (1 कुरिन्थियों 1:30) “□□ “खुदा का भेद” है, जिसमें हिकमत और मारिफ़त के सारे ख़ज़ाने छिपे हुए हैं।” (कुलुस्सियों 2:3) “□□ अनदेखे खुदा की सूरत और तमाम मख़लूक़ात का पहलौठा है, क्योंकि उसी में सारी चीज़ें पैदा की गईं, आसमान की हों या ज़मीन की, देखी हों या अनदेखी, तख़्त हों या रियासतें या हुकूमतें या इख़्तियारात, सारी चीज़ें उसी के वसीले से और उसी के वास्ते पैदा हुईं। और वो सब चीज़ों से पहले है, और उसी में सारी चीज़ें क़ायम रहती हैं, और वही बदन यानी कलीसिया का सर है।” वही मब्दा है और मुर्दों में से जी उठने वालों में पहलौठा, ... बाप को भी पसंद आया कि सारी मामूरी उन में सुकूनत करे। (कुलुस्सियों 1:14 से 19) “जिसे उस ने सारी चीज़ों का वारिस ठहराया और जिसके वसीले से उस ने आलम भी पैदा किए, वो उसका जलाल का पर्तो और उसकी ज़ात का नक्श हो कर सब चीज़ों को अपनी कुदरत के कलाम से सँभालता है। वो गुनाहों को धोकर आलम-ए-बाला पर किब्रिया की दाहिनी तरफ़ जा बैठा।” (इब्रानी 1:2, 3) “नजात का बानी” है, दुखों के वसीले से कामिल किया गया।” (इब्रानी 2:10) “येसू को कि मौत का दुख सहने के सबब जलाल और इज़ज़त का ताज उसे पहनाया गया।” (ईज़न आयत 9) “वो खुद भी उन की तरह उन में शरीक हुआ ताकि मौत के वसीले से उसको जिसे मौत पर कुदरत हासिल थी, यानी इब्लीस को तबाह करे।” (आयत 14) “रहमदिल और दयानतदार सरदार काहिन है।” (आयत 17) “रसूल और सरदार काहिन।” (3:1) “बड़ा सरदार काहिन, खुदा का बेटा, बेगुनाह।” (4:14, 15) “मलिकसिदक़ के तरीक़े का अबद तक काहिन है, कामिल है, अपने सब फ़रमांबदारीं के लिए अबदी नजात का बाइस हुआ।” (5:6, 9) “पर्दे के अंदर... जहां येसू हमेशा के लिए मलिकसिदक़ के तरीक़े का सरदार काहिन बन कर हमारी खातिर पेशरू के तौर पर दाखिल हुआ।” (6:19) “पाक और बे-रिया और बे-दाग़ और गुनेहगारों से जुदा और आसमानों से बुलंद है।” (7:26) “आइन्दा की अच्छी चीज़ों का सरदार काहिन।” (9:11) वग़ैरह-वग़ैरह।

“मसीह के ये चंद अस्मा और सिफ़ात पौलूस के ख़तों में से सिर्फ़ इसलिए बयान कर दिए हैं कि यूहन्ना रसूल और पौलूस में यकसानियत नज़र आ जाए और कि वो दोनों एक ही शख़्स की बाबत बोल रहे हैं। हाँ, फ़र्क़ सिर्फ़ इस में है कि अव्वल-उल-ज़िक़र उसकी आस्मानी और ज़मीनी हर-दो तारीख़ बयान करता है, मगर

मोअख़्खर-उल-ज़िक्र मसीह के अपने काम पूरा करके आस्मान पर चले जाने के बाद उन फ़वाइद का बयान करता है, जो ईमान की शर्त पर उसकी मौत से ईमानदार को हासिल होते हैं, जिनमें से रसूल खुद था। मेरा मतलब सिर्फ़ ये है कि मैंने मसीह के बारे में यूहन्ना और पौलूस का एक ही नज़रिया दिखा दिया।”

लेकिन अब मोअतरिज़ के इस बयान या दावे का जवाब देना है जो उस ने दलील तशाबह-बयना-अल-शैर्न (दो अलग-अलग चीजों में एक जैसी बातें नज़र आना) की बुनि याद पर मसीही फ़ल्सफ़ा-ए-कलाम पर किया है जो उसकी अपनी ज़बान में यूँ है, वो यूनानी इल्मी ख़ज़ानों और सिकंदरिया के इल्मी जवाहर-रेज़ों का ज़िक्र करते हुए कहता है कि:

“उन के मुतालए ने ईसाई फ़ल्सफ़ा की हैसियत को तिश्त अज़बाम कर दिया। इस सारे फ़ल्सफ़ा-ए-कलाम का माख़ज़ लफ़ज़न म’अनन, हत्ता कि उन पौलूसी या कलीसी इस्तिलाहात तक का सरचश्मा वो फ़ल्सफ़ा माना गया है जो मसीही इब्तिदाई सदियों में बमुक़ाम सिकंदरिया दायर-ओ-सायर (जारी) था जिसका बानी अफ़लातून था।” (सफ़हा 111)

“सो जानना चाहिए कि एक ही शख्स की ज़िंदगी के हालात चारों इंजील-नवीसियों में से हर एक ने अपने-अपने ख़ास मुद्दा को मद्-ए-नज़र रखते हुए अलैहदा-अलैहदा नुक्ता-ए-ख़याल से लिखे और इब्तिदाअन ख़ास-ख़ास मुखातबीन के लिए। चुनान्चे क़दीम तरीन इंजील-ए-मुक़द्दस मर्कुस की है जिसने किसी ख़ास जमाअत या शख्स या क़ौम के लिए नहीं बल्कि सब के लिए यकसाँ लिखी और बताया कि येसू वही मसीह है और बाउज़लत (जल्दी से) एक वाक़िए से दूसरे वाक़िए पर उबूर करता चला जाता है।”

“दूसरी मुक़द्दस मत्ती की इंजील है जो मर्कुस से एक क़दम पीछे को हटता है और ना सिर्फ़ मसीह का नसब-नामा ही दर्ज करता है बल्कि उसकी मो’जिज़ाना पैदाइश का भी बयान करता है, और अगर तावात्तुर हदीस से क़त-ए-नज़र करके देखा जाये तो ज़ाहिर हो जाता है कि उसकी इंजील अपनी वज़ा’अ-ए-क़ता’अ, पुराने अहदनामे से इक़्तिबास करने और अपने तमाम पहलूओं में इब्रानी है, और दानीएल की पेशीनगोइयों को अपने ज़ेर-ए-नज़र रखते हुए वो मसीह को येसू की शख्सियत में “इब्रे-आदम”, “इब्रे-दाऊद”, “इब्रे-अल्लाह” की हैसियत में पेश करता है।”

“पुराने अहदनामे की शरीअत और अम्बिया का तकमिला और पुराने अहद के लोगों की ज़िंदगी ईमान और उम्मीद का मरज’आ, येसू मसीह की शख्सियत में दिखाता है। मुक़द्दस लूका की इंजील जो बलिहाज़-ए-ज़माना तीसरी है, वो मत्ती से एक क़दम और पीछे को जाती है और ना सिर्फ़ विलादत-ए-मसीह की तारीख़ ही का

बल्कि उसके पेशरू यूहन्ना का भी ज़िक्र करती है। ये अपने तास्सुरात में पौलूसी है और मसीह की शख़्शियत को पहले यहूदियों के, और फिर यूनानियों के सामने पेश करता है।”

“मगर चौथी इंजील में जो मुक़द्दस यूहन्ना की लिखी हुई है, उस गहरी और वसीअ खलीज पर पुख़्ता पुल बाँध कर दिखाया है जो यहूदियों और यूनानियों के दर्मियान हाइल थी, यानी यूनानियों का फ़ल्सफ़ा और उस का इक़्तज़ा, और यहूदियों की बाइबल और उस का मरज'आ, येसू मसीह कलिमतुल्लाह (كلمته الله) है। और जिस तरह कि पौलूस रसूल के ख़तों में यूनानी-माइल यहूदियों और रब्बियों की तालीमात की तरफ़ अक्सर इशारात मिलते हैं, इसी तरह यूहन्ना की इंजील में सिकंदरी यहूदी फ़ल्सफ़ा की जो इफिसुस में उन दिनों राइज था और जहां यूहन्ना रसूल क्रियाम रखता था, ज़ाहिरी सूरत और असरात पाए जाते हैं जिससे इंजील-नवीस का यही मज़कूर-बाला मुद्दआ नज़र आता है। पस ये चौथी इंजील उन तीनों माक़बल की अनाजील का तकमिला है। जैसी कि ये इंजील अपने तर्ज़-ए-बयान, इशारात, और लब-ओ-लहजे में फ़लस्तीनी है, वैसी कोई और इंजील नहीं है।”

“ताहम अपनी बैरूनी क़ता'अ व वज़ा'अ में, यानी जिन बातों का वो ज़िक्र करता और जिन को वो हज़फ़ करता है, गरज़ कि वो अपने तमाम मक़सद और मुद्दआ में यूनानी-माइल यहूदियत के तास्सुरात से भी ख़ाली नहीं, या बइबारत दीगर, यूहन्ना रसूल वस्त में है। उस के एक पहलू पर फ़लस्तीनी यहूदियत थी, जिसका मर्कज़ इफिसुस था, और दूसरे पहलू पर सिकंदरी यहूदियत थी, और हर-दो जानिब से उस पर असर पड़ रहा था। फ़लस्तीनी तास्सुरात वो थे जो तौरात और नबियों की किताबों और यरूशलेमी तल्मूद और रब्बियों की तालीमात से निकल कर उस पर पड़े थे, और दूसरी तरफ़ सिकंदरी तास्सुरात वो थे, जिन्होंने फ़ाईलो की तस्नीफ़ात से (जो ख़ुद अफ़लातूनी तास्सुरात में था) निकल कर उस पर असर डाला था। चुनान्चे सिकंदरी और फ़लस्तीनी मक़तज़ियात को, उस ने मसीह येसू की शख़्शियत में ऐसे तौर पर पूरा किया कि दोनों को एक कर लिया, और जुदाई की दीवार जो बीच में थी ढा दिया, “और सलीब पर दुश्मनी को मिटाकर और उस के सबब से दोनों को एक तन बनाकर ख़ुदा से मिला दिया, और अब इसी में हर एक इमारत मिल-मिलाकर ख़ुदावंद में एक पाक मुक़द्दस बनती जाती है।” ख़याल की ये सिकंदरी सूरत बिलख़ुसूस यूहन्ना रसूल के नज़रिया-ए-कलाम में पाई जाती है, “जिसको वो 'ज़िंदगी', “नूर” और “सरचश्मा-ए-जहान” के तौर पर ज़ाहिर करता है, मगर उस की अस्लियत और माहियत सिकंदरी सूरत से बिल्कुल दिगरगूँ है, गोया उन ख़ाली सूरतों में ज़िंदा रूह फूँक दी है।”

“सिकंदरी फ़ल्सफ़े के मुताबिक़ ख़ुदा दुनिया से बिल्कुल अलग-थलग है। इन्सान उस को जान नहीं सकता। उस में कोई गुण नहीं हैं, यानी वो निरगुण है, ना ही

कोई उस का नाम है। मादा बुरी चीज़ है, खुदा उस से ताल्लुक नहीं रख सकता, मगर यूहन्ना रसूल बताता है कि खुदा हम से दूर नहीं है। इन्सान उस को पहचान और जान सकता है। उस में तमाम सिफ़ात-ए-हसना मौजूद हैं और उस का नाम है, और मादा से उस का ख़ास ताल्लुक है, वो बाप है।”

“सिकंदरी फ़ल्सफ़ा के मुताबिक़ खुदा दुनिया पर ऐसे तौर पर अपना अक्स डालता है जैसे सहाब (नब्युला) का अक्स पड़ता है। इसके एवज़ में रसूल बताता है कि वो एक शख्स है, और उस का कलमा (लोगस) भी शख्सियत रखता है, मगर यह सिकंदरिया कलमा या कलाम (लोगस) नहीं जो नेकी और ताक़त से मुरक्कब है, बल्कि फ़ज़ल और सच्चाई से मामूर है (और जो पौलूस के बयान के मुताबिक़ खुदा की कुद्रत है)। ये कलमा लोगस इब्तिदा में था और खुदा के साथ था, मगर उस इब्तिदा से मुराद अज़लियत है, ना खल्क़त की इब्तिदा (पौलूस रसूल के बयान के मुताबिक़)। और ज़माने के लिहाज़ से वो खल्क़त का पहलौठा है, मगर पैदाइश के लिहाज़ से वो खुदा का इकलौता बेटा है। मादा अज़ली नहीं है और ना ही वो बुरा है।”

“लोगस यानी कलाम मादा का भी ख़ालिक़ है, क्योंकि “जो कुछ पैदा हुआ है उस में से कोई चीज़ भी उस के बग़ैर पैदा नहीं हुई” और कि “इब्तिदा में कलाम था, और कलाम खुदा के साथ था, और कलाम खुदा था।” उस के बग़ैर कुछ भी दुनिया में मौजूद ना था। यूहन्ना रसूल सिकंदरी तालीम के खिलाफ़ फ़रमाता है कि मादा में कुछ बुराई नहीं, बल्कि खुदा का उस के साथ ताल्लुक़ है, और कि “वो कलाम मुजस्सम हुआ और फ़ज़ल और सच्चाई से मामूर हो कर हमारे दर्मियान रहा, और हम ने उस का ऐसा जलाल देखा, जैसा बाप के इकलौते का जलाल।” और फिर उस के ज़मीनी काम का ज़िक़र शुरू करता है, जैसा कि पौलूस रसूल खुदा के सर-ए-अज़ीम का ऐलान करता है, “यानी वो जो जिस्म में ज़ाहिर हुआ, और रूह में रास्तबाज़ ठहरा, और फ़रिश्तों को दिखाई दिया, और ग़ैर-क्रौमों में उस की मुनादी हुई, दुनिया में इस पर ईमान लाए, और जलाल में ऊपर उठाया गया।” (1 तीमुथियुस 3:16)

फ़ाईलो कहता है कि, “अगरचे हर एक शख्स खुदा का फ़र्ज़न्द कहलाने के क़ाबिल नहीं, ताहम उस को अपने हालात की ऐसी इस्लाह करनी चाहिए कि खुदावंद के पहलौठे बेटे (कलाम) के हालात के मुताबिक़ उस के हालात हो जाएं।” मगर यूहन्ना रसूल फ़रमाता है कि, “जब तक कोई ऊपर से पैदा ना हो, रूह-उल-कुद्स से पैदा ना हो, तब तक वो खुदा की बादशाहत में दाख़िल नहीं हो सकता, उस को देख नहीं सकता। वो इस लोगस को नजात-दहिंदा, वकील, शफ़ी, बड़ा काहिन तो बताता है, मगर यह नहीं बताता कि वो कुर्बानी क्या है जो बतौर कफ़ारा के खुदा के सामने पेश करता, और वह खून किस का खून है जिसके छिड़कने से काहिन

पाक करता है, वो बीना (बुनियाद) क्या है जिस पर वह इन्सान की वकालत या शफ़ाअत करता है।

मगर यूहन्ना रसूल फ़रमाता है कि “अगर कोई गुनाह करे तो बाप के पास हमारा एक मददगार मौजूद है, यानी येसू मसीह रास्तबाज़, और वही हमारे गुनाहों का कफ़ारा है, और ना सिर्फ़ हमारे ही गुनाहों का, बल्कि तमाम दुनिया के गुनाहों का भी।” (1 यूहन्ना 2:1, 2) वग़ैरह, जिससे ज़ाहिर है कि उस ने उन हक़ाइक़ को बयान किया है, जिन तक ना तो फ़ाईलो पहुँचा और ना यूनानी फ़ैलसूफ़ पहुँचे। बल्कि उस की नज़र में पुराने अहदनामा की वो तमाम रीत व रसूम, और ख़ास कर कफ़ारे की कुर्बानी थी, मूसा की तौरेत और नबियों की पेशख़बरियाँ और नमूने और अलामतें, मसलन ब्याबान में साँप को बुलंदी पर रखना वग़ैरह।

और अगर हम पुराने अहदनामे पर नज़र दौड़ाएँ तो उसी से मुबर्हन (ज़ाहिर) हो जाएगा कि जिस क़द्र इस्तिलाहात यूहन्ना रसूल और फ़ाईलो यहूदी हकीम ने इस्तिमाल किए हैं, वो सब वहीं से लिए हुए हैं। इन दोनों का मुश्तर्क़ा सरचश्मा वही तौरेत और अम्बिया हैं। चुनान्चे वहाँ भी मसीह को उन्हीं वस्फ़ी नामों से मज़कूर किया है, मसलन:

गडरिया या चरवाहा (ज़करियाह 13:7, यसायाह 40:11), ममसूह या मसीह (दानीएल 9:24, 25, ज़बूर 2:2), आस्मानी ग़िज़ा या आस्मानी रोटी (खुर्रूज 16:12-15), खुदा का नाम (खुर्रूज 23:21), शफ़ी (यसायाह 53:12), कलमा (होसेअ 14:2), खुदावंद (ज़बूर 110:1), काहिन (ज़बूर 110:4), मुक़द्दस या कुद्दूस (ज़बूर 16:10), बेटा या खुदा का बेटा (अम्साल 4, ज़बूर 2:7, 12, दानीएल 3:25), बादशाह (ज़बूर 2:6), दानिश या दानाई (अम्साल 8:11, 14, 22, 23), ईमान (हबक्कूक 2:4) वग़ैरह।

और अगर हम पौलूस रसूल के इस नज़रिये का मुक़ाबला पुराने अहदनामे से करें, तो उस का सरचश्मा भी वही है, बख़ौफ़-ए-तवालत उसे नज़रअंदाज़ किया जाता है। जैसा कि मैं पहले कह आया हूँ, अब भी कहता हूँ कि जिस तरह फ़ाईलो ने अफ़लातूनी तालीम से मुतअस्सिर हो कर ये चाहा कि किताब-ए-मुक़द्दस और यूनानी फ़िल्सफ़े की तालीमों को आपस में मिलाकर यहूदियों और यूनानियों के दरमियान जुदाई की गहरी ख़लीज पर बाँध कर, इन दोनों को बाहम मिला दे, उसी तरह यूहन्ना और पौलूस, हर-दो ने किताब-ए-मुक़द्दस और यूनानी फ़िल्सफ़ा हर दो से मुतअस्सिर हो कर चाहा कि मसीहियों और ग़ैर-मसीहियों की तालीम के ज़रिये से सय्यदना ईसा मसीह में उन को लाकर एक कर दें। ज़बान एक, लब-व-लहजा एक, मगर असली तसव्वुर और हक़ीक़ी मफ़हूम उन से मुतफ़रिक्क़ (मुख्तलिफ़), यानी कलमा-ए-मुजस्सम की तारीख़ और काम। या दूसरे अल्फ़ाज़ में यूँ समझो कि खुदा के

कलमा या लोगस का एक ज़हनी बयान है और दूसरा तारीखी, एक मुजस्सम होने से पहले का नज़रिया, दूसरा मुजस्सम होने और उस के बाद उस के कामों और सिफ़ात का नज़रिया। लेकिन इस से ये नतीजा नहीं निकल सकता कि इन की तालीम गैर-मसीही और अफ़लातूनी है, क्योंकि जिस तरह शरीअत यहूदियों को मसीह तक पहुँचाने को उस्ताद ठहरी...

इसी तरह पेगनइज़्म (कुफ़्र व इलहाद का मज़हब) और इल्म-ए-नुजूम और शम्स-परस्ती और यूनानी फ़ल्सफ़ा भी उन उन अक्वाम को मसीह तक पहुँचाने को उस्ताद ठहरे। मगर फ़ाईलो और पौलूस रसूल में बड़ा फ़र्क़ है। चुनान्चे फ़ाईलो का लोगस साया है, अस्ल में कुछ नहीं, यानी जिस की कोई शख़्सियत नहीं। मगर पौलूस रसूल के नज़दीक वो एक शख़्स है जो जिस्म में ज़ाहिर हुआ।

फ़ाईलो के नज़दीक कफ़्रारे की कोई ज़रूरत नहीं, रसूल के लिए कफ़्रारा एक हक़ीक़त और ज़रूरी अम्र है जो खुदा की तरफ़ से अज़ल से मुकर्रर हुआ, और वो मसीह है। फ़ाईलो का सरदार काहिन शफ़ाअत या सिफ़ारिश तो करता है, लेकिन शफ़ाअत के लिए बुनियाद कोई नहीं। गुनाहों की माफ़ी और पाकीज़गी का तो फ़ाईलो ज़िक्र करता है, लेकिन वो बर्दा नहीं जिसके खून से गुनाहों की माफ़ी और पाकीज़गी हासिल होती है। पर्दे के परे खुदा की हुज़ूरी में जाने का कोई वसीला नहीं, और ना ही ज़िंदा खुदा की ख़िदमत करने के लिए रूह को मुर्दा कामों से रिहाई मिलती है। अगरचे इब्रानियों का ख़त अपने इस्तिदलाल में सिकंदरिया का फ़ल्सफ़ी रंग रखता है, मगर वो सिकंदरी फ़ल्सफ़ा मग़्लूब (हारा हुआ) है, ना कि ग़ालिब। सिकंदरी फ़ल्सफ़े का तक्मिला पौलूस रसूल ने किया, अव्वल-उल-ज़िक्र में सिर्फ़ सूरत थी, मोअख़्ख़र-उल-ज़िक्र में अस्तियत और हक़ीक़त।

वो बर्तन तो था, मगर ख़ाली। अगरचे दोनों में बज़ाहिर इश्तिराक़ है, मगर तह में इफ़तिराक़ है। पस अज़हर-मिन-श्शम्स है कि यूहन्ना और पौलूस के मुस्तलहात गो लफ़ज़न सिकंदरी हैं, क्योंकि हर-दो यूनानी में लिख रहे हैं, लेकिन म'आनन इनका ताल्लुक़ पुराने अहदनामे से है और वही उनका सरचश्मा है। दोनों ने फ़ाईलो और अफ़लातून के फ़लसफ़ों को मसीह के क़दमों पर लाकर रख दिया है, जिसका सरचश्मा पुराने अहदनामे की पेशीनगोइयाँ और अलामतें और नमूने और रसूमात हैं, जिनका तकमिला नए अहदनामा में हुआ।

महज़ जानिबैन तशाबुह (मुमासलत) इस अम्र का सबूत नहीं कि "इस सारे फ़ल्सफ़ा-ए-कलाम का माख़ज़ लफ़ज़न व मा'अनन... वो फ़ल्सफ़ा माना गया है जो मसीही इब्तिदाई सदियों में बमुक़ाम सिकंदरीया दायर व सायर (जारी) था, जिसका बानी अफ़लातून था।" मान लेने के क्या म'अनी? जैसे आपने यूरोपियन मुहक्किक़ीन

की अंधी तकलीद की है, वैसे ही इनकी यकतरफ़ा तहक़ीक़ थी। शागिर्द के लिए बस है कि वो अपने उस्ताद के बराबर हो।

फिर ख़्वाजा साहब का ये उसूल कैसा क़ाबिल-ए-तारीफ़ और क़ाबिल-ए-तक़लीद है कि जो बातें किसी दूसरे मो'तक़िदात (अक़ीदों) में आ गई हों, वो इल्हाम-ए-इलाही से मन्सूब नहीं की जा सकतीं, या दूसरे अल्फ़ाज़ में इल्हाम-ए-इलाही वही होता है जो बहुतों के मो'तक़िदात में यकसाँ (एक जैसा) ना हो। जिन बातों में मुवाफ़िक़त और यकसानियत पाई जाये, वो सब इल्हाम से ख़ारिज हैं।

क्या ख़्वाजा साहब इसी उसूल को कुर्आन के हक़ में इस्तिमाल करके उन बातों को, जो कुर्आन में मौजूद हैं मगर उस से पहले किसी और क़ौम के मो'तक़िदात में आ गई हों, उन को कुरआनी इल्हाम से ख़ारिज कर देने को तैयार हैं? और अगर कुर्आन के हक़ में आप ऐसा नहीं कर सकते, तो औरों के हक़ में ऐसा करने का आपको क्या हक़ हासिल है?

मेरे क़ाबिल और मुहतरम ख़्वाजा साहब! जिस बात को आप अपने लिए पसंद नहीं करते, उस को दूसरे के लिए भी पसंद ना करने का उसूल हमेशा याद रखें। फिर एक और बात है कि अगर आपके इस उसूल को, जिसका ऊपर ज़िक्र हो चुका, और जो आपकी किताब यनाबीअ-उल-मसीहियत के सफ़्हा 116 पर ऊपर से सातवीं सतर से शुरू करके ग्यारहवीं सतर पर ख़त्म होने वाले बयान से मुस्तंबित होता है, आपके इस बयान से, जो उसी किताब के सफ़्हा 2 में पाया जाता है, मुक़ाबला किया जाये तो साफ़-साफ़ तज़ाद (टकराव) ज़ाहिर होता है, और मैं नहीं समझ सकता कि उनमें किस बात को दुरुस्त समझा जाये और किस को ग़लत।

“जब दुनिया के सब मज़ाहिब अपनी असली हैबत व सूरत में एक ही सरचश्मा से निकले और एक ही तालीम लाए। जब अल्लाह त'आला ने एक ही चीज़ से नस्ल-ए-इन्सानी की परवरिश की, तो ये भी ज़रूरी था कि रुहानी परवरिश भी एक ही तरीक़ से, एक ही चीज़ से हो।”

मेरे मुहतरम वकील साहब, बताईए, जब किसी वकील की तक़रीर में, जो वो अदालत में कर रहा हो, अपने दावे के ख़िलाफ़ बयानात हों और उसमें मुतज़ाद बातें पाई जाएं, जैसा आपके बयानात मुन्दरिज़ा यनाबीअ-उल-मसीहियत में पाया जाता है और जिसकी एक मिसाल ऊपर मज़कूर हुई, तो क्या वो उसके दावे के सबूत हो सकते हैं? क्या अदालत ऐसे बयान को मंज़ूर करके उसके मुवक्किल के हक़ में फ़ैसला देगी? क्या उस ने दानाई और होशियारी से अपने मुवक्किल की वकालत की?

मुझे अपने गैबी दोस्त की इस हालत पर ताज्जुब भी आता है और अप्सोस भी, कि ऐसे आलिम फ़ाज़िल होकर ऐसी लज़िशें उनकी तहरीर में क्यों? मुझे तो आपकी ऐसी बातों से आपके ब-तकरार (ये कहने पर कि "ईसाइयों से हमारा इख़िलाफ़ महज़ मुहब्बत और इख़्लास की बिना पर है" बड़ा भारी शक पैदा होता है। ख़ैर, ख़ुदा आपकी सिरात-ए-मुस्तक़ीम की तरफ़ रहनुमाई करे।

दूसरी बात जो हमारे वकील साहब ने बयान फ़रमाई है, वो मसअला तस्लीस है। चुनान्चे सफ़हा 105 में यूं लिखा है:

"मसअला तस्लीस भी एक पुरानी कहानी है। हिन्दुस्तान पहले से ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश का परस्तार था। ये भी नज़ारा कायनात के ही मुख्तलिफ़ नक्शे हैं। ज़मीन पर हमेशा पैदाइश, परवरिश और हलाकत का दौर मुस्तक़िल जारी है। इसी हकीकत को शाकतक मत ने ग़लीज़ अल्फ़ाज़ में पारबती, ब्रह्मा, विष्णु, महेश को जमा कर दिया है। वही वक़्त ख़ल्क और वही कुव्वत नमूदार (परवरिश) और वही कुव्वत हालिका और वही ज़मीन जिस पर इन तीनों कुव्वतों ने अमल करना है। अगर हिन्दुस्तान में ब्रह्मा, विष्णु, महेश और पारबती है, तो दूसरी जगह बाप, रूह-उल-कुद्स, बेटा और मर्यम है। यही तीन में एक और एक में तीन। वहां पर आने तखय्युल (खयाल) ने इन हक़ाइक को मुश्रिकाना रंग में देखा। हर एक चीज़ को ख़ुदा बनाकर उन्हें इन्सानी जामा में उतारा। यहां ईसाइयत ने भी मसीह का हकीकी मज़हब छोड़कर इस अम्र में तस्वीर-परस्ती की...

"मसअला तस्लीस के मुताल्लिक में क़दीमी यूनानियों की एक हकीमाना हकीकत पर रौशनी डालता हूँ। उस ज़माने के लोग हर एक चीज़ में एक और रूह को कायम करके उसे अपना मा'बूद ठहराते थे और यूनानी रब-उल-नूअ कहते थे। चुनान्चे बरस का भी एक रब-उल-नूअ था, जिसकी तीन कैफ़ियतें बताई जाती थीं। पहली कैफ़ियत में वो ज़िंदा होता है, दूसरी में वो मरता है, तीसरी में वो फ़र्जी उठता है और जी उठने के साथ ही कुल दुनिया को नई ज़िंदगी बख़्शता है। इस तीसरी कैफ़ियत को यूनानी अलग मुस्तक़िल वजूद में देखते थे। उसका नाम वो अल-सालूत या नजातदहिंदा रखते थे।"

"मगर फ़ीसा गौरस ने एक और तस्लीस का पता दिया है, जिस को क़दीम से कुल यूनानी हुकमा ने तस्लीम किया हुआ था। इस तस्लीस के तीन उक़नूम थे: (1) ख़ुदा, (2) रूह-ए-कायनात, (3)

रूह-ए-इन्सानी। ये भी दरअस्ल इसी मसअला कलाम तालीम दादा अफ़लातून की दूसरी शकल है, मगर हकीकत एक ही है और हकीकत हक्क है, जिसे मैं आगे चलकर बयान करूंगा। लेकिन मुश्रिकाना फ़ित्रत ने कहीं इसे बुत-परस्ती के रंग में देखा और कहीं इसे मसीहियत की शकल दे दी। हकीम प्लोटॉक हमें एक और तस्लीस का हवाला देता है जो कहते हैं कि जनाब ज़रतुश्त ने तज्वीज़ की थी। इसके तीन अक़ानीम थे: (1) बाप (एज़द) जिससे कुल दुनिया निकली, (2) मथुरा (सूरज), (3) कायनात। ये बात भी सही है, अगर रुहानी निज़ाम में फ़ल्सफ़ा-ए-कलाम अपने असली म'अनों में, जैसा मैं आगे चलकर बयान करूंगा, सही है, तो जिस्मानी निज़ाम में हज़रत ज़रतुश्त की मुजव्वज़ा तस्लीस भी दुरुस्त है। निज़ाम-ए-शम्सी की कुल कायनात जो इन्सानी निगाह में है, वो सूरज ही से निकली है। गोया सूरज ही वो चीज़ है, जिस को जिस्मानियत में ख़ुदा त'आला ने सबसे अक्वल पैदा किया है। फिर उसी से कुल कायनात थी। लिहाज़ा ब-अल्फ़ाज़-ए-इस्तिआरा, अगर ख़ुदा सब का बाप है, तो उसका पहलौठा बेटा मथुरा (सूरज) है। सारी चीज़ें उसके वसीले से पैदा हुईं, और जो कुछ पैदा हुआ है, उसमें से कोई चीज़ भी उसके बग़ैर पैदा नहीं हुई। ये एक बदीही हकीकत है।”

“अब अगर एक मुश्रिकाना निगाह नय्यर-ए-आज़म (सूरज) ही को अपना ख़ुदा और बाप मान ले, तो कोई अजब बात नहीं। लिहाज़ा इंजील यूहन्ना की पहली चंद आयात मसीह या किसी इन्सान पर तो मुतल्लिकन नहीं, मगर सूरज पर हर म'अनों में एक मुश्रिकाना खयाल से सही तौर पर चस्पाँ होती हैं...”

“लफ़ज़ “लोगस” (कलाम) से उन (फ़ाईलो) की मुराद अक्ल या इरादा है। ये मसअला दरअस्ल पैदाइश-ए-कायनात के मुताल्लिक हकीम अफ़लातून का नज़रिया है, जिसे हुकमा-ए-इस्लाम ने “अक्ल-ए-अक्वल” से ताबीर किया है। यानी ख़ुदा त'आला का वो इरादा-ए-अज़ली जिसमें कुल कायनात का ज़हूर और उसकी तर्तीब थी, और जिसके मातहत या मुताबिक़ कुल दुनिया पैदा हुई। इस अम्र से किस को इन्कार हो सकता है कि ज़हूर-ए-कायनात से पहले “इरादा-ए-अज़ली” का वजूद होगा। वही इरादा सबसे पहले पैदा हुआ, उसी से हर एक चीज़ पैदा हुई, उस का जलवा ज़र्रे-ज़र्रे में है। इन्सान या कोई मख़्लूक़ जब तक अपने हालात उसी इरादा-ए-अज़ली के मुताबिक़ ना करे, फ़लाह नहीं पा सकता। लिहाज़ा वही

अज़ली इरादा ब-अल्फ़ाज़-ए-इस्तिआरा "ख़ुदा का पहलौठा" है। ख़ुदा की तरफ़ से मख़्लूक पर हुक्मरान है, उसी से कुल दुनिया बनी, जो कुछ दुनिया में है, उसी के वसीले से है। वही दुनिया की रोशनी है, वही दुनिया का मुंजी है, वही ख़ुदा का तर्जुमान है, यानी ज़ात-ए-अज़ली का मज़हर-ए-अव्वल और मज़हर-ए-कुल।

अल-ग़र्ज़, वो सारी बातें जो हकीम अफ़लातून ने "अक्ल-ए-अव्वल" के मुताल्लिक़, फ़ाईलो ने "लोगस" के मुताल्लिक़, यूहन्ना ने "कलाम" के मुताल्लिक़ और कलीसिया ने "मसीह" के मुताल्लिक़ कहीं, वो बातें अक्ल-ए-अव्वल, लोगस, कलाम, मसीह पर मुंतबिक़ (चस्पा) हों या ना हों, लेकिन "इरादा-ए-अज़ली" इन सब पर हावी है। इन हुकमा ने तो इस हक़ीक़त "इरादा-ए-अज़ली" का नाम "पहलौठा बेटा", "दुनिया की रोशनी", "मख़्लूक का सबब", "ख़ल्क़", "अज़ली व अबदी" वग़ैरह-वग़ैरह रखा, जिनसे इनकी मुराद सिर्फ़ इज़हार-ए-मक़सद थी। लेकिन अवाम ने इन नज़रियों को इन्सानि लिबास पहनाया-बुत बनाए, मुसव्विरी के तमाम फ़नून ख़र्व कर दिए। एक हद तक ये भी दुरुस्त था, अगर हक़ीक़त सामने रहती और ये तस्वीरें और मुजस्समे फ़क़त तश्रीह समझे जाते। लेकिन आने वाली नस्लें हक़ीक़त से अलग होकर इन मुजस्समों और तस्वीरों की परस्तार हो गईं। हिन्दुस्तान का भी यही हाल हुआ। मगरिब में इसी मुश्रिकाना फ़ित्रत ने क़दीमी हक़ाइक़-ए-हकीमाना को चौथी पाँचवीं सदी में मसीह की सूरत में पेश किया।" (यनाबीअ-उल-मसीहियत सफ़हा 116 से 120)

इस सारे इक्तिबास को पढ़ने से बिल्कुल सतही तौर पर ये अम्र अज़हर-मिन-शशम्स (सूरज की तरह रोशन) हो जाता है कि मसअला तस्लीस के बयान करने में हमारे मुहतरम वकील साहब ने अपने मुवक्किल की पैरवी करने की बनिस्बत हमारे हक़ में ये शहादत दे दी कि मसअला तस्लीस वाक़ई क़दीम और आलमगीर और हुकमा के इक्तिज़ा-ए-फ़ित्री (फ़ित्री ज़रूरत) के मुताबिक़ है और सूरज की हर तीनों कैफ़ियात इसकी मुसद्दिक़ (तस्दीक़ करने वाली) हैं। हत्ता कि (वो) ख़ुद भी अपनी ज़बान से ख़ुदा की एक किस्म की तस्लीस के इक़बाली (इक़रारी) हैं।

मैं कहता हूँ, हम में और आप में और मज़कूर-बाला हुकमा के खयालात में मसअला तस्लीस की नौईय्यत या तश्रीहात में फ़र्क़ है, जैसा कि आपने ख़ुद ज़ाहिर कर दिया है। मगर जनाब के क़ौल के मुताबिक़ "हक़ीक़त एक ही है और हक़ीक़त हक़का है... लेकिन मुश्रिकाना फ़ित्रत ने कहीं इसे बुत-परस्ती के रंग में देखा।" और आपका ये कहना कि "कहीं इसे मसीहियत की शक़ल दे दी" जिससे आपकी मुराद

मगरिब में वो मुश्रिकाना फ़ित्रत है जिसने क़दीमी हक़ाइक़-ए-हकीमाना को चौथी-पाँचवीं सदी में मसीह की सूरत में पेश किया (सफ़हा 120), इस तालीम पर कुछ असर नहीं रखता, जो किताब-ए-मुक़द्दस में, और खुसूसन इंजील में मुन्दरज है और जो इंजील में और तमाम इब्तिदाई मसीही बुजुर्गों के इलाहियात में मौजूद है, जो चौथी-पाँचवीं सदी से बहुत पहले की है।

मुझे अफ़सोस तो ये है कि ख़्वाजा साहब ने अपनी मज़ऊमा (खयाली) तस्लीस को क्यों पेश कर दिया, जिसकी कुरआनी तस्लीस के सामने कुछ भी हक़ीक़त और वक़अत नहीं। अगर कुरआनी तस्लीस पेश कर देते तो हक़ीक़त ज़ाहिर हो जाती। वही तो इस्लाम है जो इंजील में भी मौजूद है। मैं इस कुरआनी तस्लीस को कुरआन के अल्फ़ाज़ में निहायत इख़्तिसार के साथ पेश करके इंजील की तस्लीस को इसके मुक़ाबले में रख दूँगा। फिर देखना, हक़ीक़त क्या है, और इस हक़ीक़त पर से मुश्रिकाना फ़ित्रत की बुत-परस्ती का रंग किस तरह उतर जाता है और अस्लियत नुमायाँ हो जाती है। और साथ ही ये भी दिखाऊँगा कि पुराने अहदनामे में भी इस हक़ीक़त का इज़हार कैसे वाज़ेह और साफ़ अल्फ़ाज़ और म'आनी में किया गया है। मगर ऐसा करने से पेशतर (पहले) मैं चाहता हूँ कि चंद अल्फ़ाज़ मज़कूर-बाला अक्साम (मुख्तलिफ़ क्रिस्में) तस्लीस के बारे में लिख दूँ।

सो वाज़ेह हो कि ये तमाम अक्साम (मुख्तलिफ़ क्रिस्मों) की तस्लीस महज़ खयाली मसाइल हैं, मसीही तस्लीस से बिल्कुल मुतफ़रि़क़ (अलग) बल्कि ख़िलाफ़ हैं। उलूहियत से उनका कुछ लगाओ या मुनासबत नहीं, क्योंकि बा'ज़ तो उनमें से कैफ़-ओ-कम से मुनज़ज़ह (पाक) नहीं और वे माद्दा की कैफ़ियात हैं जो मख़्लूक़ हैं। खुदा और उनमें ख़ालिक़-मख़्लूक़ का ताल्लुक़ है।

मसलन बरस की तीन कैफ़ियतें, फ़ीसा ग़ौरत की तस्लीस में एक उक़नूम खुदा है जो वाजिब-उल-वजूद, ख़ालिक़ व मालिक व परवर-दिगार हस्ती है और अज़ल से अबद तक कायम व दायम है और तमाम सिफ़ात-ए-इलाही से मुत्तसिफ़ है। मगर वे कायनात और रूह-इन्सानी दूसरे दो उक़नूम (जिन्हें ख़्वाजा साहब ने उक़नूम नहीं कहा), क्योंकि वे लिख भी न सकते थे, इसलिए कि वे उक़नूम हो ही नहीं सकते, मख़्लूक़ हैं, मुरक्कबात में फ़ानी हैं, मुहताज व ताबे हैं और उलूहियत उनमें नहीं है।

और यही सूरत प्लोटॉक़ वाली तस्लीस की है। ये सब तो खुद ख़्वाजा साहब के क़ौल के मुताबिक़ मुश्रिकाना तबीअत के इक़तिज़ा हैं और उन लोगों को हक़ाइक़ "मुश्रिकाना रंग में नज़र आ रहे थे।" तो फिर मसीहियत को इन मुश्रिकाना तालीमात के साथ क्या ताल्लुक़ और निस्बत? हाँ, अगर इन अम्सिला से मसीही कुछ इस्तिफ़ादा कर सकते हैं, तो वो ये है कि तस्लीस की तालीम वो इलाही हक़ीक़त है जो क़दीम से तमाम क़ौमों में पाई जाती है, जिसको वे अपनी अक्ल और हिक्मत से तलाश और

तहक़ीक़ करते-करते ऐसे दूर जा पड़े कि उन्होंने खुदा की सच्चाई को बदल कर झूट बना डाला और मख़्लूक़ात की ज़्यादा परस्तिश और इबादत की, निस्बत उस ख़ालिफ़ के जो अबद तक महमूद है। (रोमियों 1:25)

ये सबकी सब बातें तो मुसन्निफ़ यनाबीअ-उल-मसीहियत के क़ौल के मुताबिक़ "हकीमाना हक़ीक़त, नज़ारा-ए-कायनात, पुराने तख़य्युल ने इन हक़ाइक़ को मुश्रिकाना रंग में देखा", ये तस्लीस "जिस्मानी निज़ाम" में है, न कि इलाही हक़ीक़त या रुहानी नज़ारा या इल्हाम-ए-इलाही से असली रंग में ज़ाहिर की हुई हक़ीक़त, जिसको इंजील ने ज़ाहिर किया है।"

मसअला तस्लीस के मुताल्लिक़ "अगर एक मुश्रिकाना निगाह नय्यर-ए-आज़म ही को अपना खुदा और रब मान ले तो हमारी बला से हमें क्या? आख़िर है तो यह काम "मुश्रिकाना निगाह" का।" अगर आप भी मान लें, जैसा कि खुद मान ही रहे हैं (क्योंकि मानते न तो मुश्रिकाना निगाह वालों की वकालत किस तरह करते) तो कुछ मज़ाइक़ा नहीं। मसीही तस्लीस तो तमाम मुश्रिकाना और हकीमाना तस्लीसों से बिल्कुल मुतफ़रिक़्, आ'ला व रफ़ीअ है,

चह निस्बत ख़ाक़ रा बा आलम-ए-पाक²

आप को हक़ीक़त से क्या वास्ता, जब आप ही के क़ौल से ये बातें सूरज पर हर बयान में एक मुश्रिकाना ख़याल से सही तौर पर चस्पॉ होती हैं। तो ऐसा ही करते चले जाएँ। आपके ही क़ौल के मुताबिक़ वो मसीह पर तो चस्पॉ नहीं होतीं। यही तो हमारा मक़्सद है कि ये सारी तस्लीसों मसीही तस्लीस पर चस्पॉ नहीं हो सकतीं। हमारे मुख़ालिफ़ की दलील ही की ज़बान से हमारा दावा सही हो गया। और उन्हीं के ज़िम्न में आपकी मज़ऊना (ख़याली) तस्लीस भी आ गई, जो खुदा और उसके अज़ली इरादे से बनती है।

ज़ाहिर है कि ख़्वाजा साहब का खुदा से कुछ झगड़ा नहीं, जिसका इकरार है, और न ही रूह-उल-कुदस से, जो उनका मअहूद ज़हनी है, लिहाज़ा ख़िलाफ़-अज़-मबहस है। सारा झगड़ा तो मसीह खुदावंद की "असली ज़ात" के बारे में है। "ज़ात-ए-इलाही का मज़हर-अव्वल और मज़हर-ए-कुल, अल्लाह त'आला के इरादा-ए-अज़ली" को तो मानने को तैयार हैं और मान भी लिया है, मगर मसीह को कलिमतुल्लाह (كلمته الله) का मज़हर मानने के लिए न सिर्फ़ तैयार ही नहीं, बल्कि सख़्त मुख़ालिफ़ हैं।

² मिट्टी (मामूली चीज़) की उस पाक दुनिया (आ'ला, पाक चीज़) से क्या निस्बत (बराबरी) है?

जनाब-ए-मन, इरादा अज़ली हक़ सुब्हानहू की ज़ात का मज़हर है या खुद उसकी एक सिफ़त है, ना कि मज़हर, मज़हर तो कायनात है, जिससे वो अज़ली इरादा ज़ाहिर होता है। और न सिर्फ़ इरादा अज़ली का मज़हर है, बल्कि उसकी दीगर सिफ़ात, मसलन उसकी कुद़त और दानाई वग़ैरह का भी मज़हर है। इस अज़ली इरादे का मुरीद कौन है? क्या वो अल्लाह जल्ले शानहु नहीं? पस वो ज़ात-ए-अल्लाह तो न हुई, बल्कि सिफ़त-ए-अल्लाह है। हमें तो आपका ये फ़ल्सफ़ा भी इसी "मुश्रिकाना रंग" में रंगा हुआ नज़र आता है, जिसमें क़दीम हुक़मा का ये फ़ल्सफ़ा आप रंगा हुआ दिखाते हैं। तो आप में और उन में क्या फ़र्क़ रहा? हम तो ऐसे मुश्रिकाना रंग को हक़ीक़त पर से उतारना चाहते हैं, मगर आप उस पर और चढ़ाए जाते हैं।

प्यारे और मुहतरम दोस्त, ये कुरआन के मज़हब-ए-हक्का से, जो उसने तस्लीस के बारे में इंजील से लेकर आपको सिखाया है, और बा'ज़ वक़्त आप अपने मबहस से ऐसे दूर चले जाते हैं कि अस्ल मज़मून को सिर्फ़ एक-दो फ़िक़्रों के बाद ही भूल जाते हैं। चुनान्चे तस्लीस का बयान करते-करते फ़ौरन कहते हैं कि "यहाँ ईसाइयत ने भी मसीह का हक़ीक़ी मज़हब छोड़कर इस अम्र में तस्वीर-परस्ती की।"

वाह साहब! सवाल अज़-आसमां, जवाब अज़-रेसमां। बहस तो तस्लीस पर और आ गिरेमसीहियों की तस्वीर-परस्ती पर। भला तस्लीस को तस्वीर-परस्ती से क्या निस्बत? क्या इंजील में तस्वीर-परस्ती का हुक़म है या जाइज़ ठहराई गई है? क्या आप साबित कर सकते हैं कि मसीही तस्वीरों को मान कर उनकी परस्तिश करते हैं?

ज़रा रोमन कैथोलिकों ही से, जिनकी तरफ़ आपका ग़ालिबन इशारा है, पूछो, क्या वो कहेंगे कि हाँ, हम ऐसा करते हैं? कुजा मसअला-ए-तस्लीस का मफ़हूम, और कुजा तस्वीर-परस्ती का मफ़हूम। इन दोनों मफ़हूमों में तो तबाइन की निस्बत पाई जाती है, यानी इन दोनों मफ़हूमों में कुछ भी ताल्लुक़ नहीं। तो एक मफ़हूम दूसरे मफ़हूम पर किस तरह सादिक़ आ सकता है? लिहाज़ा तस्वीर-परस्ती का इल्ज़ाम मसीहियों पर न सिर्फ़ लगाना ही फ़ुज़ूल है, बल्कि मसअला तस्लीस के मबहस में इसे लाना ही फ़ुज़ूल है।

अब मैं कुरआनी तस्लीस हदिया नाज़रीन करता हूँ। लेकिन पहले इस अम्र को मल्हूज़ ख़ातिर रखना ज़रूरी है कि लफ़ज़ "तस्लीस" या "उक़नूम" मसीही इलाहियात की मुस्तलहात (इस्तिलाहें) हैं, जिनमें से इस मसअला मुन्दरिजा किताब का बयान किया जाता है। ये अल्फ़ाज़ न तो इंजील में पाए जाते हैं और न कुरआन में। इसलिए अगर इन मुस्तलहात (इस्तिलाहात) से, जो इंजीली नहीं, थोड़े अरसे के लिए ज़हन को साफ़ रखकर इस मसअले पर कुरआन और इंजील की तालीम पर ख़ुलूस-ए-क़ल्ब (साफ़-दिल) से ग़ौर करेंगे तो हक़ीक़त आप पर मुबर्हन (ज़ाहिर) हो जाएगी।

दूसरी बात ये कि जिस तस्लीस पर कुरआन में एतराज़ हुआ है, वो इंजीली तस्लीस नहीं, और न ही मसीही उसको मानते हैं, और न ही मसीह इब्रे-मर्यम को और मर्यम को (अल्लाह के साथ मिला कर) तीन ख़ुदा मानकर मसीह को तीन में का एक मानते हैं। हाँ, अलबत्ता उस कलिमे को, जो इब्रे-मर्यम के जिस्म में मुजस्सम हुआ था, उसको उक़नूम-ए-सानि मानते हैं, जो बाइबल की तालीम है।

और न ही मियाँ कमालुद्दीन साहब के “तीन में एक और एक में तीन” को हम से कुछ वास्ता है, क्योंकि उसका ताल्लुक भी इंजील से कुछ नहीं। हाँ, एक बात का ज़िक्र यहाँ भी ज़्यादा ज़रूरी मालूम देता है, कि अल्फ़ाज़ “बाप, बेटा, पैदा हुआ” ये इंजीली मुस्तलहात हैं, जिनसे जिस्मानियत को बिल्कुल दखल नहीं, और उसके मफ़हूमात से बिल्कुल अलैहदा हुआ करते हैं, और उसी इल्म की रोशनी में उनको समझा और इस्तिमाल किया जाता है।

कुरआन में बेशक अल्फ़ाज़ ख़ुदा, मसीह, या कलिमे के हक़ में नहीं आए, बल्कि जिस्मानी नुक्ता-ए-खयाल से ख़ुदा और मसीह के बारे में उन पर एतराज़ किया गया, जिसको हम भी तस्लीम करते हैं, क्योंकि वो जिस्मानी तौर पर मुस्तअमल (इस्तिमाल) नहीं हुए, और न ही ख़ुदा और कलिमे के बारे में वो जिस्मानी तौर पर मफ़हूम होते हैं। पस इन बातों पर ऐसे मौक़े पर ज़रूर लिहाज़ रखना चाहिए ताकि ग़लतफ़हमी वाक़ेअ न हो। ये अम्र रोज़-ए-रोशन की तरह ज़ाहिर है कि ख़ुदा की हस्ती का कुरआन में एतराफ़ किया गया है, उसकी जमा (सभी) सिफ़ात का भी ज़िक्र है, और उसको बिल-ख़ुसूस “अल्लाह” के नाम से मौसूम किया गया है। इसके लिए किसी कुरआनी सूरह या आयत का हवाला देने की कुछ ज़रूरत नहीं।

फिर अल्लाह के कलिमे की हस्ती का भी इक्रार है, कि वो “कलिमतुल्लाह” और “रूहु-मिन्हू” है। वो मर्यम मुबारका की तरफ़ डाला गया, और उसके बतन-ए-अतहर से पैदा हुआ, मुजस्सम होकर। उसका रुत्बा रसूल का है, दुनिया और आख़िरत में मर्तबा वाला है, लोगों के लिए निशान है, ख़ुदा की रहमत है, और उसका होना अम्र-ए-मुक्त्तजियन है। वो क्रियामत की घड़ी का निशान है। शैतान ने उसको नहीं छुआ, यानी वो हर क्रिस्म के गुनाह से पाक और मासूम है, वग़ैरह-वग़ैरह।

फिर “रूह-उल-कुद्स” का भी साफ़-साफ़ ज़िक्र है, कि “हमने ईसा इब्रे-मर्यम को रूह-उल-कुद्स से मदद दी।” अहले-किताब के दिलों में उसी रूह से ईमान और इमदाद दी है। कुरआन भी रूह-उल-कुद्स ही के ज़रीये नाज़िल हुआ, वग़ैरह।

तमाम बयान से ज़ाहिर है कि "अल्लाह, कलिमतुल्लाह, रूह-उल-कुद्स" का ज़िक्र कुरआन में बे-ऐनिही, वैसे ही तौर पर आया है। जैसे इंजील में ख़ुदा, कलिमा (लोगस) और रूह-उल-कुद्स का है, न कुरआन में उन को ख़्वाजा साहब के अल्फ़ाज़ में "तीन में एक और एक में तीन" कहा गया है, न इंजील में, न कुरआन में उनको तस्लीस कहा है।

कुरआन के इस बयान (खुले) बयान के सामने ख़्वाजा साहब की अज़ली इरादे की तस्लीस की क्या वक़अत और ज़ीनत हो सकती है। ये मसअला तस्लीस मज़हब, या अस्ल इस्लाम का एक जुज़्व-ए-आज़म है, जो क़दीम से हर ज़माने की क़ौमों के अंदर मौजूद है, गो मुश्रिकाना रंगत से रंगीन है, और ग़लत-बयानी से भरा। क्योंकि ये सिर्फ़ उन की अक्लों की इख़्तिरा (बनावट) है, न कि इल्हाम-ए-इलाही का मुकाशफ़ा। ताहम इंजील के लोशन से उसको अस्ल हक़ीक़त पर से धोकर साफ़ करना हमारा काम है, ताकि वो राज़-निहानी जो इंजील में मौजूद है, और जिसकी तस्दीक़ कुरआन ने भी की है, अपनी पूरी चमक, दमक और क़द्र-मंज़िलत में मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) हो जाए। और इस अम्र में भी हमारे मुखालिफ़ ही के वकील की ज़बानी हमारा दावा साबित, और वकील साहब का दावा ख़ारिज हो गया।

मैं बज़ोर ख़्वाजा साहब को दावत देता हूँ, कि आईए, सच्चे इस्लाम के पैरौ (मानने वाले) हो जाइए, जो आप ही की ज़बानी "नूह से लेकर सय्यदना मसीह तक हर क्रोम व मिल्लत को दिया गया।" और मसीह के पास से वो मुसफ़फ़ा (साफ़) और पाकीज़ा लेकर नोश फ़रमाएँ, जो "जो वही इलाही की शक़ल में" इंजील शरीफ़ में ख़ुदा की तरफ़ से सब के लिए यक़साँ नाज़िल हुआ।" सय्यदना मसीह आप को बर्दी (खुले) अल्फ़ाज़ दावत देता है:

"अगर कोई प्यासा हो, तो मेरे पास आकर पिए। जो मुझ पर ईमान लाएगा उसके अंदर से, जैसा कि किताब-ए-मुक़द्दस में आया है, ज़िंदगी के पानी की नदियाँ जारी होंगी।"